मुनि श्रेष्ठ श्री सुशील कुमार जी कृत श्रेष्ठ कृति

जियो और जीने दो

जियो और जीने दो

'वाणी में अमृत' का सागर संजोये मुनि श्री सुशील कुमार जी ने प्राणीमात्र को 'जियो और जीने दो' का शाश्वत सन्देश दिया है। उनके ओजस्वी वाणी के क्रान्तिकारी वचनों को पुस्तक के रूप में प्रस्तुत करते समय हर्ष गर्व अनुभव हो रहा है।

शब्दों में पिरोये गये ये मोती इतनी तेज और गहरी चमक के साथ प्राणीमात्र का मार्ग प्रशस्त करेंगे कि संसार का हर व्यक्ति जियो और जीने दो को अपना जीवन धन बना लेगा।

मुनि श्रेष्ट सुभाग जी की प्रेरणा से यशस्वी उपन्यासकार जय प्रकाश शर्मा ने इन्हें संयोजित किया और कमला पाकेट बुक्स के अध्यक्ष नरेश चंद जैन ने इन्हें प्रकाशित करने का बीड़ा उठाया है।

जियो और जीने दो

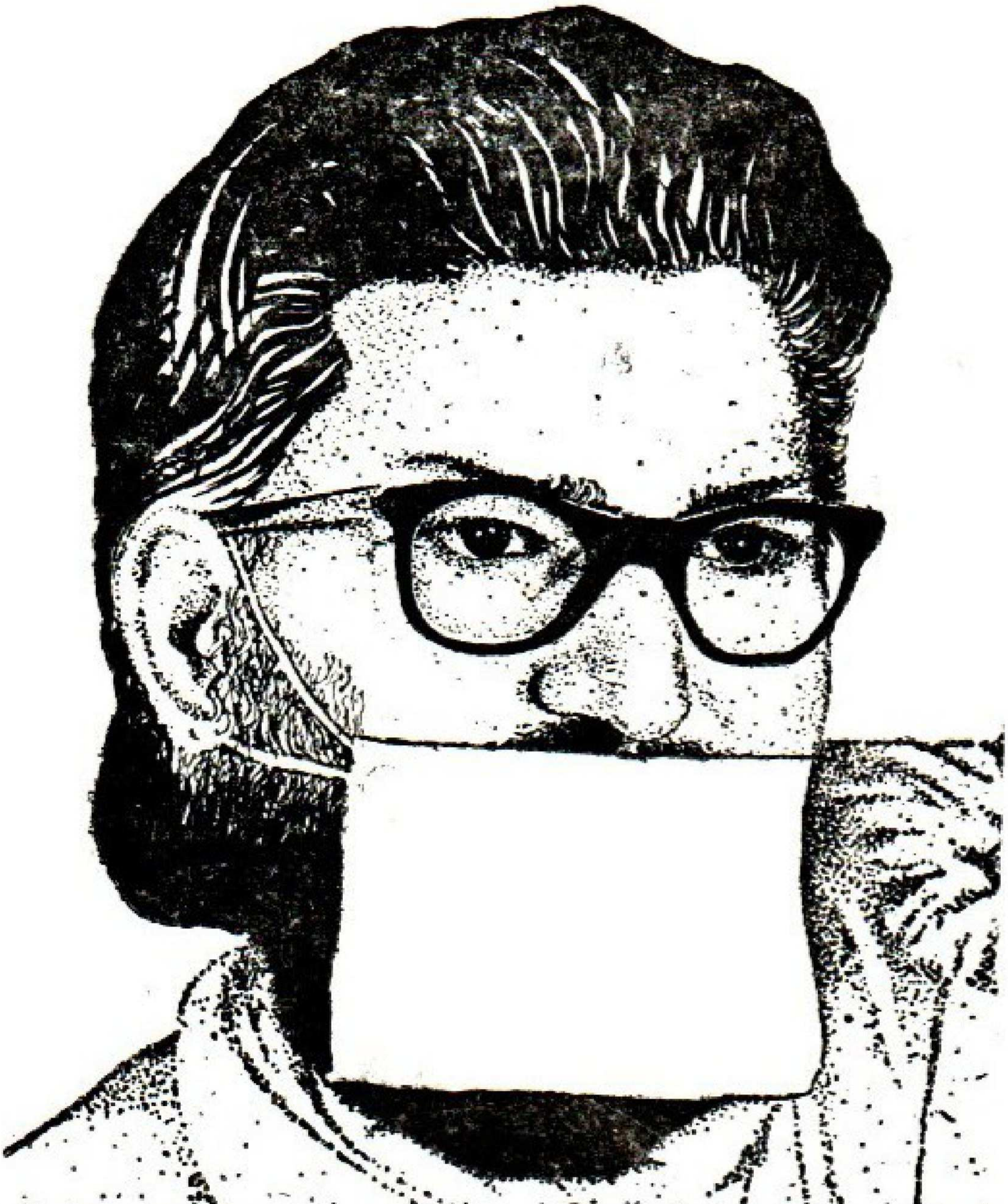

मुनि सुशील कुमार जी

जियो और जीने दो

●

प्रेरक :
मुनि सुभाग जी

●

सम्पादक-संयोजक :
जयप्रकाश शर्मा

●

प्रकाशक :
नरेश कुमार जैन
कमला पाकेट बुक्स
मेरठ

●

मूल्य :
तीन रुपये

●

मुद्रक :
दुष्यन्त प्रिंटिंग प्रेस
जत्तीवाड़ा, मेरठ

प्रकाशकीय----

इसे मैं एक बहुत बड़ा संयोग और शुभयोग ही मानता हूँ कि तीर्थंकर भगवान महावीर के परिनिर्वाण समारोह के सम्पन्न होने के साथ देश में अनुशासन-पर्व का शुभारम्भ हुआ और प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने कोटि-कोटि भारतीयों के लिए २०–सूत्रीय कार्य-क्रम का श्रीगणेश किया। ऐसे सुअवसर पर जब मुनि सुशील कुमार जी विश्व को अहिंसा का संदेश देकर पुनः भारत आ रहे हैं तो हम आदरणीय मुनिवर सुभाग जी की कृपा से पांच पुस्तकें आपको भेंट कर रहे हैं। इस पुस्तक-माला के संयोजक देश के जाने-माने राष्ट्रीय उपन्यासकार श्री जय प्रकाश शर्मा हैं। इन पुस्तकों के आवरण-शिल्पी श्री सुबोध मिश्रा हैं। समस्त मित्रों के सहयोग से ये पुस्तकें उस पुण्य भूमि को समर्पित हैं, जहां राम, कृष्ण, महावीर महात्मा गांधी, मुनि सुशील कुमार और देश-गौरव प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के साथ-साथ हम सब ने जन्म लिया।

नरेश चन्द जैन
अध्यक्ष
कमला पाकेट बुक्स
५६-शीशमहल, मेरठ

विषय-संकेत

१. प्राणी रक्षा की परम्परा
२. सती की परम्परा
३. वाणी की महिमा
४. शिक्षा का उद्देश्य
५. भूदान और धर्म
६. आजादी
७. सुमति और कुमति
८. भारत का आदि पुरुष
९. योगीराज कृष्ण
१०. रक्षा बन्धन
११. क्रिया और भावना
१२. तपोमहिमा
१३. गुण स्थान का विकास
१४. जैन पर्व परम्परा
१५. जैन साधना का अंतिम ध्येय

१: प्राणी रक्षा की परम्परा !

मैं जिन अमर वीरों की कहानी आज कहने जा रहा हूँ। उन्होंने अपने प्राणों की बाजी लगा कर अपने जीवन का उत्सर्ग करके भी प्राणियों की रक्षा की है।

हमने प्राणी रक्षा को धर्म माना है। यह किसी के दबाव से नहीं, अपित यह लाखों वर्षों की परम्परा है।

संसार के सब धर्मों में से एक दया नाम की चीज निकाल दो और देखो, वह धर्म-धर्म ही नहीं रहेगा। धर्म का ढांचा रहेगा। चैतन्य विहीन नर कंकाल की उपमा उसे सर्वथा उचित रहेगी। वह उस शव से भी ज्यादा भयंकर हो जायेगा।

धर्म की प्रतिष्ठा दया की दया पर ही अवस्थित है। दया बिन धर्म बकरी के एक स्तन की तरह व्यर्थ है जिसमें न तो दूध है, न शोभा ही देते।

दया से शून्य मनुष्य-मनुष्य नहीं राक्षस है।

मानवों की बात जाने दीजिये, रक्षा का काम अपनी जान देकर भी जानवर तक करने को तत्पर देखे जाते हैं।

एक कुत्ते को लीजिए, वह रूखा-सूखा खाकर क्या मालिक की रक्षा नहीं करता। कुत्ते में एक ही वृत्ति खराब

है। वह अपने भाईयों से लड़ता है। यदि यह अपनी यह वृत्ति बदल कर उल्टा कर दे तो Dog–God बन सकता है। कुत्ता भगवान बन सकता है ।

तुम्हें भी अपनी दृष्टि बदलनी है। तुम में दया और प्रेम के स्रोत का अटूट भन्डार भरा हुआ है। वह अभी तुम्हारे कुटुम्ब तक ही सीमित है। उसे दुनिया में बिखेरना है। तुमने मौत की तुच्छ रेखायें खींच रखी हैं। वे रेखायें मिटानी हैं। विश्व तक आप अपना आत्म विस्तार करो।

प्राणियों की रक्षा करो। दया के साकार रूप बनो। तब तुम्हारा उद्धार होगा।

भगवान महावीर ने चतुर्विध तीर्थ-प्रवर्तन किया। तीर्थ प्रवर्तन का उद्देश्य बताते हुये भगवान फरमाते हैं :—

सब प्राण भूत जीव और सत्य की रक्षा और दया के लिये तीर्थ का प्रवर्तन किया जा रहा है।'

यहां जीव की रक्षा और दया के दो शब्द आये हैं। भगवान रूप-रूप में प्रवचन करते थे। यहां रक्षा और दया दो शब्द हैं इसलिये निश्चित है कि इनके भिन्न-भिन्न दृष्टि-कोण हैं।

रक्षण का अर्थ अपने आप को जीव की हिंसा से बचाने का किया जाये तो दया का अर्थ दूसरे जीवों को दुःख से तड़पते हुए देख कर अनुकम्पा से उनका उपकार करना है।

हमारे सामने एक पुस्तक है। इसके एक सूत्र में दया की व्याख्या की गई है :—

पापाचरणादात्मरक्षा दया:—

अर्थ–पाप के आचरण से अपने आपको दया !

तो महोदय पाप के आचरण से अपने आपको बचाना दया है, तो पाप के आचरण से दूसरे को बचाना क्या होगा ?

आज दया के प्रति अनेक विचार हैं। मूल सिद्धान्त पर मतभेद है। उन्हें दया पर मतभेद होगा। उन्हें प्राणी रक्षा करने में, दया करने में पाप की सम्भावना दिखाई देती है। वे कहते हैं, असंमति की रक्षा करने में, भविष्य में उसके द्वारा होने वाले पापांश हमारे आकर चिपट जाते हैं।

मैं आज प्राणी रक्षा के सम्बन्ध में हमारे प्राचीन से प्राचीन प्रमाण उपस्थित करना चाहता हूँ। आज विदेशों में भी करीब ८० वर्ष से प्राणी रक्षा की तरफ प्रयत्न आरम्भ हुए हैं। पर हमारे देश के सभी धर्मों की परम्परा अक्षुण्ण है।

ठाणांग सूत्र के चौथे ठाणे में चार प्रकार की अनुकम्पा बतलाई गई है।

उनके आत्मानुकम्पा तरितंन सिद्ध की बतलाई। वहां परानुकम्पा क्या है, वहां पाठ आता है।

आत्मानुकम्पी-परानुकम्पी

भिक्षाचरी के वर्णन में सुमगडाँग सूत्र में कहा गया है कि साधु भिक्षाचरी करके अपना भोजन प्राप्त करें। क्योंकि अग्नि के आरम्भ में पृथ्वी काया से उस काया तक के जीवों का समारम्भ होता है।

वहां पृथ्वी काम से उस काम की रक्षा के लिए साधु को अग्नि का आरम्भ न करने का विधान है।

भगवान ने पृथ्वी काम आदि सभी असंमति का जीवन चाहा। क्या भगवान को पाप होगा ?

उत्तराध्ययन सूत्र में में ६ कारण आहार छोड़ने के आये हैं। इनमें एक है–प्राणी दयट्ठाए। प्राणी की दया के के लिये साधु आहार छोड़ दे।

कभी कोई कारण से मकान के आसपास तरी-निगादे या जीव जन्तु की उत्पत्ति हो जाए तो साधु को आहार न दे।

तथा साधु आहार लेने अन्दर गया और आंगन में कबूतरों आदि को दाने डाल दिए हों तो साधु उन कबूतरों की दया के लिये एक जगह रुक जाए, ताकि वे उड़ न जायें।

साधु जीवों की रक्षा के लिये आहार त्यागे, यहां तक ही बात सीमित नहीं है, अगर करना भी जीवों की रक्षा के लिये ही है। अहार न करने से चक्षु-इन्द्रिय शक्तिहीन हो जाए। इसलिए साधु अहार करे।

कुछ हमारे भाई असंयमी को कुपात्र समझ कर उनकी सेवा, रक्षा में एकान्त पाप समझते हैं। यह एक भ्रम है। भ्रम कैसे हुआ ? जरा आप मेरे प्रश्नों का उत्तर दीजिये।

प्रश्न—आप संयम को जीवन मानते हैं या असंयम को ?

उत्तर—असंयम को जीवन मानते हैं।

प्रश्न—असंयम धर्म है या पाप ?

उत्तर—असंयम पाप है, धर्म नहीं।

प्रश्न—जब असंयम पाप है तो असंयमी पापी है या धर्मात्मा ?

उत्तर—पापी।

प्रश्न—पापी को सहायता देना धर्म है या अधर्म ?

उत्तर—अधर्म ।

बस यही भ्रम जाल है । जिसके चक्कर में भोले प्राणी आ जाते हैं । दीखने में उक्त प्रश्नोत्तर सरल और सीधे दिखाई देते हैं ।

यहां संयम असंयम का चक्कर दे दिया गया हैं । चोरी पाप है । चोर को मदद देना भी पाप है । यहां तक तो ठीक है । पर, यहां हमारा मतभेद खड़ा होता है ।

संयम का अर्थ है—बुराई को अन्तर निकाल कर फैंक देना । बुराई को नहीं फैंकना असंयम है ।

परन्तु एक डाक्टर साधु का इलाज करने जा रहा है । उसी समय में वह एक कस्साब का भी इलाज करता है । माना कि कसाई पापी है—इससे क्या डाक्टर भी पापी हो जाएगा ? डाक्टर उसके पाप बढ़ाने को नहीं आया, उसे स्वस्थ करने के लिये इलाज कर रहा है ।

यहां भावना प्रधान है । यदि किसी चोर के कांटा लग गया । दुःख से वह कराह रहा है, यदि आप करुणा बुद्धि से उसका कांटा निकाल देते हैं और वह चोर फिर भी चोरी करता है—तो यह जिम्मेदारी क्या आपकी होगी ?

यदि यह जिम्मेदारी भी आप अपनी समझते हैं तो—

एक संयमी को आपने गरिष्ट आहार दे दिया । उसने उस आहार को खाकर विषय वासना जानने से वह पतित होकर संसार में आ गया तो क्या वह पाप तुम्हारे सिर हुआ ?

पात्र कुपात्र के अनुसार दान या दया का महत्व है कि तुम्हारी भावना पर उसका आधार है ।

यदि सुपात्र को देने मात्र से धर्म लाभ हो तो कोई वेश्या पेड़े में विष किसी संयमी को खिलादे तो क्या उसमें भी धर्म हो जाएगा ?

आप स्वयं विचार करें। दान का महत्त्व पात्र पर निर्भर है या दयालु की भावना पर लिर्भर है। सारा सत्य सत्य नग्न हो जाएगा।

हमें किसी से मतभेद नहीं। हम किसी से घृणा नहीं करते। घृणा करना पाप है। तथ्य को स्वीकार करो। धर्म का यही सन्देश है।

दया का अर्थ अपने को बचाना ही नहीं, दूसरे को बचाना भी है—

कोई मरे, कोई जीवे ।
सुसरा घोल पतासा पीवे ॥

नहीं चलेगा।

प्राणों की बाजी लगा कर भी प्राणियों की रक्षा करने का दिव्य सन्देश हमारे पूर्वज दे चुके हैं आइये मैं आपको उस युग में ले चलूं।

मुनिसुव्रत स्वामी—२०वें तीर्थंकार का शासन चल रहा है। हजारों वर्ष पुरानी कहानी है। इधर उधर के गये नहीं शास्त्र सम्मत कथा है।

धर्म रुचि अणगार अनुकंपा

धर्म रुचि अणगार मास मास खमण का पारणा कर रहे हैं। उसमें आज्ञा लेकर आहार के लिये नगर में पधारते हैं। तपस्वी राज नागश्री ब्राह्मणी के घर आहार लेने पधा-रते हैं।

नागश्री के घर में आज किसी विशेष कारण से भोजन की तैयारियां हुई थीं। उसने अनेक प्रकार के व्यंजन बनाये, उसमें तुम्बी की शाक भी बनी। भूख होना स्वाभाविक है। पर, भूल निकाल लेना बुद्धिमानी है। उसने अपने बनाये सभी व्यंजनों को चख कर बनावट को जानना चाहा। चखने पर उसे तुम्बी का शाक अतिशम कड़वा लगा। उसने सोचा यदि यह शाक महमानों को या घर वालों को खाने के लिये रख दिया जाता तो आज सारी चतुराई पर पानी फिर जाता।

बाहर फेंकने के लिये भी उसके पास कोई रास्ता न था। जिधर देखो उधर लोगों के कारण रास्ते बन्द थे।

अचानक धर्म रुचि अणचार पधार गये। ये सन्त लोग उसे ठीक रोड़ी से मालूम हुए। उसने सोचा यदि इयके पात्र में तुम्बी का शाक डाल दिया जायेगा तो वे न तो किसी से कहेंगे, न मेरी फजीहस होगी। उसने उस महान् तपस्वी के पात्र में सम्पूर्ण शाक एकदम डाल दिया।

तपस्वी कोई भोजन भट्टतोर्थ नहीं। उन्होंने सोचा आज शाक ही ज्यादा मात्रा में आ गया, तो अपन केवल शाक खाकर ही पारणा कर लेंगे।

धर्म रुचि अणगार गुरु के पास पहुँचे। गुरु ने इतना सारा शाक देखकर आश्चर्य किया। और स्वयं चखने के उपरान्त कहा—हे धर्म रुचि! यह कड़वी तुम्बी का अहार है, इसे खाने से मौत निकट आ जायेगी, इसलिये इसे निर्वध-प्रारूक जगह देख कर पठा दे।'

गुरु आज्ञा शिरोधार्य करके धर्म रुचि अणगार ईंटों के

भट्टे पर गये । वह स्थान इस काम के लिये बिलकुल प्रासुक होता है ।

परीक्षा के लिये थोड़ा सा शाक जमीन पर डाला और उसकी प्रतिक्रिया देखने लगे । थोड़ी देर में चींटियां आती हैं । घी चींटियों को बहुत दूर से खींच लेता है । चींटियां आयीं । उस शाक को खाया और देखते-देखते तड़फड़ा कर मर गयीं ।

धर्म रुचि अणगार की करुणा जागी । अनुकंपा के वे थरथरा उठे । सोचा इतने से यह अनर्थ हो गया तो भला इस पात्र के सब अहार द्वारा कितना अनर्थ हुआ । क्यों न मैं स्वयं इन असंख्य प्राणियों की रक्षा के लिये यह मैं स्वयं करके अपने प्राणों की बाजी लगा दूं । और वे कड़वो तुम्बी का आहार स्वयं कर जाते हैं ।

उन छोटे-छोटे प्राणियों की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बाजी लगा दी ।

इतने छोटे जीवों के लिये अपने प्राणों की बाजी लगाने महापुरुष का यही एक इतिहास है । जिसे हम जानते हैं । ऐसा आदर्श उदाहरण दुनिया के इतिहास में देखने को नहीं मिलेगा ।

महाराजा शिवी की बात आप जानते हैं । जिन्होंने एक कबूतर की रक्षा के लिए अपने शरीर की आहुति दे दी ।

भगवान अरिष्ट नेमी को कौन नहीं जानता । अरिष्ट नेमी के विवाह का निश्चय हो जाता है । यदुवंशी बारात सजाकर जाते हैं । अरिष्ट नेमी रथ पर सवार हैं । उग्रसेन ने यादवों के स्वागत और भोजन का प्रबन्ध किया । हजारों

प्रजारों प्रकार के मृग पक्षी और जानवर वाड़ों में बन्द कर रखे हैं। जानवर भी अपनी मौत को पहचानते हैं। वे त्राहि त्राहि कर रहे हैं। अरिष्ट नेमी की नजर पशुओं के वाड़ों पर पड़ी, सारथी से पूछा-

सारथे ! ये वाड़े में पशु क्यों इकट्ठे किए गये हैं ?

सारथी-आपके विवाह में आये हुए यादवों को भोजन कराने के लिये !

अरिष्ट नेमी ने सोचा-अरे रे विवाह के आरम्भ में ही इतना अनर्थ हो रहा है कि मेरे निमित से, इन मूल पशुओं का बलिदान होगा ? मुझे नहीं करना ऐसा ब्याह !

सारथी को अपने मुकुट, कुन्डल और कण्ठहार देकर कहते हैं-'जाओ। और उन पशुओं के वाड़े खोल कर मुक्त कर दो !'

सारथी वाड़ों को खोल देते हैं। और अरिष्ट नेमी गिरनार पर चढ़ जाते हैं।

जीवों की अनुकंपा और रक्षा का हमारे पूर्वजों का यह आदर्श रहा है। यह है प्राणी रक्षा की परम्परा।

एक अन्तिम कहानी भगवान महावीर के समय की भी रख दूं। महाराजा श्रेणिक के पुत्र मेघ कुमार ने दीक्षा ली। प्रथम दिन ही उन्हें रात में साधुओं के आने-जाने से पैरों से टकराने के कारण कष्ट हुआ। सोचा--यह कैसा साधु जीवन कि जिसमें ठोकरें खानी पड़ें। प्रातः होते ही भगवान महावीर से निवेदन करके अपने घर चले जाना चाहिए।

भगवान त्रिकाल ज्ञानी थे। प्रातः होते ही मेघ मुनि को बुलाकर कहा--अरे मेघ ! घबरा गया जरा से दुःख से।

अपने पूर्व भंव को याद कर जब तू—५००हथनियों का स्वामी और हजारों हाथियों का मालिक था। तू गजराज था।

हाथी बड़ा चतुर जानवर होता है। वह भविष्य को सोचने में बड़ा बुद्धिमान माना जाता है।

तूने सोचा प्रति वर्ष जंगल में आग लगती है। परेशानी होती है। क्यों न ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाय कि जिससे आग का डर ही न रहे।

तूने सब साथियों से मिलकर जंगल उखाड़-उखाड़ कर फैंक दिया। एक योजन जंगल घास फूस से भी रहित बना दिया।

अरणी और बांस के घर्षण से जंगल में आग लगी। चारों ओर हाहाकार मच गया।

हे मेघ ! तूने एक भोजन का भी मण्डल बनाया था। उसमें तू अपनी हथनियों और हाथियों सहित आ गया। मुसीबत में सब बैर, विरोध भूल जाते हैं।

इसीलिये तो कहा है :–

वा सुख पर सिल्ला पड़ो।

सभी वनचर उस मण्डल में आने लगे। शेर, चीते, हिरण खरगोश, सांप, नेवले–सब के सब उस मन्डल में आ गये। भूल गये अपना-अपना बैर।

मन्डल खचाखच भर गया। एक खरगोश उछलता-कूदता तेरे पास तक आ गया। उसे कहीं बैठने की जगह नहीं मिली। बड़ा व्याकुल था बिचारा। अचानक तेरे पैर में खुजाए लगी। पैर को खुजाने के लिये तुमने पैर उठाया

और खरगोश ने तुम्हारे पैर की जगह में अपना स्थान बना लिया ।

ज्योंहि तुमने नीचे पैर रखा, तुम्हें अनुभव हुआ कि पैर के नीचे कोई प्राणी आ गया है। एक मासूम शशा अपने प्राणों को समेटे बैठा है। तुम्हारा हृदय करुणा से भर आया। तुमने सोचा–मेघ ! कि यदि मेरा पैर शशे पर जमा कि उसका पचड़का निकल जायेगा।

तुमने अपना पैर उठाया हुआ ही रखा। हाथी कभी खड़ा नहीं रह सकता। उसमें वायु का महान प्रकोप होता है, अतः वह झूमता रहता है। तीन पैर पर झूमना सम्भव नहीं। बात बढ़ा। ३ दिन व्यतीत हो गये। पैर अकड़ गया, सभी जानवर अपने-अपने भोजन की तलाश में निकले। अग्नि शांत हो गई थी। पर, तुम ! तुम मेघ जमीन पर लुढ़क गए। हाथी के पड़ने पर कौन उठा सकता है। तुम्हारा गिरना सदा के लिए हो गया। करूणा से भरा तुम्हारा हृदय तुम्हें पशु योनि से मुक्त कराकर राजा श्रेणिक के घर ले आया। तुम राजकुमार बन गये।

कितना कष्ट सहन किया था तुमने ? क्या यह कष्ट भारी है ? मेघ !

मेघ मुनि को जाति स्मरण ज्ञान हो जाता है। और अपनी सब घटनायें प्रत्यक्ष हो जाता है। मेघ मुनि महान क्षमशीर्श बन जाते हैं।

हमारे इतिहास में प्राण भूत जीवधारी सत्य की अनुकंपा करने वालों की कमी नहीं।

दूसरे को बचाने में पाप की परम्परा वाले जरा अपने

शास्त्रों को टटोलें। देखो और मनन करो।

कुछ लोग कहते हैं—चूहे को बिल्ली से बचाने से चूहे पर राग और बिल्ली पर द्वेष होता है। ठीक है। क्या चूहा रिश्तेदार है, जिसे बचाना है। और कभी कुत्ते से बिल्ली का प्रसंग आएगा तो? उस समय बिल्ली पर राग हो जाएगा?

जरा सोचो! रागद्वेष का वहां कोई कारण नहीं है। वहां अनुकंपा ही एक मात्र कारण। और अनुकंपा रागद्वेष का विषय नहीं। यदि यही होता है तो भगवान स्वयं अनुकंपा का उपदेश नहीं देते।

भगवान महावीर कोई साधारण व्यक्ति नहीं थे। वे ५ ज्ञान के धारक थे। वे स्वयं अनुकंपा करने वाले थे। उन्होंने स्वयं शास्त्र में बतलाया है कि १२ वर्ष के तपश्चर्य काल में मैंने कभी प्रसाद का सेवन नहीं किया। उन्हें हमारे भाई लोग 'चूक' बताते हैं। अरे कहते हैं—भगवान चूक गये।

भगवान महावीर बिहार करके देश देशान्तर में भ्रमण करते थे। उनके साथ एक ब्राह्मण बटु गोशालक हो गया। गोशालक भगवान महावीर का शिष्य अपने आपको बताने लगा। महावीर तो मौन रहते थे। केवल ज्ञान के पूर्व तीर्थंकर तीर्थ प्रवर्तन नहीं करते।

चलते-चलते एक बार गोशालक एक वन में पहुँचा। वहां एक वैश पापन तापस एक वृक्ष पर अपनी टांगे बांध कर औंधा मुख करके तप करता था।

उसके जटा-जूट में जूवें पड़ गई थीं, जिन्हें उठा-उठा

कर वह पुनः अपनी जटा में इसलिये रख लेता था कि बिचारी ये मर जायेंगी।

गोशालक को न रहा गया। उसने उस तापस से कहा—ओ तापस जूवों के भंडार तू ये क्या कर रहा है ?

तापस ने कहा—भाइ तू अपना रास्ता ले···तुझे क्या ?

पर, चंचल बुद्धि के लोग शान्त होने वाले कहां ? लातों के भूत बातों से नहीं मानते।

गोशाल ने तापस को और छेड़ा तापस ने अपनी तेजो लेश्या छोड़ी ! अब क्या था ? गोशालक अग्निदाह से जलने लगा।

रुदन करता हुआ गोशालक भगवान महावीर की शरण में गया। भगवान महावीर करुणा के भन्डार अनुकंपा से साकार रूप—दया आ गई उनको। उन्होंने करुणा भरी दृष्टि गोशालक पर डाल दी। अब क्या था—अग्नि की ज्वाला अमृत की धारा से शान्त हो गई।

तापस देखकर दंग रह गया। प्रभु से क्षमा मांगने लगा और कहने लगा—प्रभु ! यदि मुझे यह मालूम होता कि यह आपके साथ है, तो यह भूल मुझसे न होती। क्षमा करो !

पर, हमारे साथी इसमें भगवान की भूल बताते हैं। गोशालक को बचाना भगवान की भूल है।

२३०० वर्ष में हजारों केवडी श्रुत केवडी अभी बड़े-बड़े आचार्य हुए, उन्हें किसी को भी भगवान की भूल मालूम नहीं हुई। २०० साल हुए, एक हमारे भाई को भगवान की भूल मालूम हुई। ठीक है, भूल निकालना हमारा धर्म है। पर भूल कौन निकाल सकता है। भगवान—भूल

करने वाले भगवान ५ ज्ञान के धारी और भूल निकालने वाला भाई २ ज्ञान का धारने वाला। वह भी २ ज्ञान, ज्ञान थे या नहीं–हम नहीं कह सकते।

तीर्थंकर की भूल निकालने वाले अपने आप को महा-तीर्थंकर होने की घोषणा क्यों नहीं कर देते ?

मैंने यह तुम्हारा इतिहास कहा। तुम कहो तो वेद पुराण और उपनिषद की बातें कहूँ। प्राणीरक्षा की परम्परा विश्व के सभी धर्मों में समान रूप से पाई जाती है।

आप हिंसा का नव कोटीत्याग करते है। इनमें करू नहीं मन से, वचन से और काया से तो आ जाता है। पर शेष छः कोटी को आप कहां रखेंगे। यदि आप प्राणीं रक्षक दया समर्थ नहीं करते ?

ईसा मोहम्मद आदि सभी पैगम्बरों कीं देख जाइये। दया का भंडार भरा मिलेगा। फांसी के तख्ते पर चढ़ा हुआ महात्मा ईसा कहता है–ऐ प्रभु ! इनको माफ करना। क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर कर रहे हैं। देखिये, दूसरे के प्रति अनुकंपा का यह आदर्श !

बड़ा दुख होता है–यह कहते हुए कि माँ-बाप को लाठी लेकर मारना पाप और माँ-बाप की सेवा करना भी पाप ? है न कितना आश्चर्य !

यदि अहिंसा का अर्थ हिंसा न करना ही माना जाय तो यह पाप बड़ा अहिंसक है। ये अकाश बड़ा अहिंसक है। पर नहीं यही अहिंसा नहीं। अहिंसा का विधेयक रूप दया और प्राणी रक्षक है।

२ : सती का परम्परा

मैं आज भारतवर्ष की उन देवियों और उनके चरित्र-बल का जिकर करने जा रहा हूँ। जिनके कारण भारतीय संस्कृति अमर है।

'ओ देवियों ! ऐ बलिदान की कहानियों ! ऐ शीलवती बहनों ! आज मैं आपकी कहानी कहने जा रहा हूँ।'

आप लोगों का सतीत्व के प्रति कितना आकर्ष है। सतीत्व जीवन को आप कितने सम्मान के साथ देखते हैं ? यह इस समय के वातावरण से परिलक्षित होता है।

आज लाखों लोग सती के दर्शन के लिए इकठ्ठे हो गये। यह सती का प्रकरण सही है या गलत ? इससे हमारा कोई तात्पर्य नहीं ! हमारा तात्पर्य तो इतना ही है कि सतीत्व जीवन के प्रति आज भी 'हमारे भारतीयों में श्रद्धा है और वह प्रचर मात्रा में। कदाचित ऐसी कोई घटना, या सती बनने की इच्छा कोई बाई पश्चिम के किसी देश में प्रकट करती तो वहां कोई भी इकठ्ठा नहीं होता।

मैं आप का ध्यान इस हंगामे की ओर से हटा कर उस के अंतस्थल में स्थित मनोवृत्ति की ओर ले जाना चाहता हूँ। जिसने आपको निष्ठावान बनाया।

आपके पास एक अनोखी संस्कृति है। आपके पास एक

विचारधारा है। एक आदर्श है। प्रेरणा मिलती है आपको उससे। जहां आपको सतीत्व का आदर दिखाई देता है, वहां आपका सिर झुक जाता है। सत्य जीवन के आप उपासक हैं।

हजारों वर्षों से ये संस्कृति चली आ रही है कि भारत-वर्ष सती की पूजा करता है। विलास की नहीं। प्रथा में बुराई भी आ सकती है। पर संसार के किसी भी कोने में भी ऐसी पवित्र भावना बहुत कम मात्रा में मिलेगी।

आज हमें इस सती की परम्परा में उगे हुए व्यर्थ के घास-फूस को दूर हटा कर वास्तविक सत्य को देखना है।

इसी विषय पर सती परम्परा पर भारत की नारी के इतिहास और उसके वर्यस्व पर आपको सुनाया जा रहा है।

आज विश्व की नारी जाति के दो रूप दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

१ समानाधिकार की इच्छुक नारियां।

२ कर्त्तव्यनिष्ट नारियां।

योरुपीय संस्कृति से पली नारी-पुरुष के समान अधिकार प्राप्त करने की इच्छुक हैं। वह राजनीति, समाज और धर्म में पुरुष के कन्धे से कन्धा भिड़ा कर बराबरी का काम और नाम करना चाहती है।

दूसरी तरफ भारतीय संस्कृति की पोषक नारी अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए अपने पति में ही लीन हो जाना चाहती है। वह त्याग की आदर्श प्रतिमा और बलिदान की देवी है।

हिन्दुत्व की नारी अधिकार नहीं चाहती। वह चाहती

है न्योछावर होना। वह अपना अस्तित्व ही नहीं रखती। बचपन में वह किसी की बेटी है। यौवन में वह किसी की पत्नी है और वृद्धावस्था में वह किसी की मां है। वह पुरुष के नाम से ही पहचानी जाती है।

वह राजा के घर में रानी, एक डाक्टर के घर में श्रीमती डाक्टर, एक मास्टर के घर में श्रीमती मास्टर और मिस्टर के घर में श्रीमती मिसेज है। उसका पति जो कुछ करता है वही उसका पेशा है। उसके पति के अस्तित्व में उसका पर्यवसान है।

स्त्री में विलीनीकरण की भावना है। पुरुष में नहीं।

यह परम्परा कब से, कहां से और कैसे आई। इसके लिये हमें अपना प्राचीनतम इतिहास ढूंढना होगा। प्राचीन अवशेष हमारे साक्षी होंगे और किंवदतियां हमारी सहायक होंगी।

तुम भारतीयों के सिर पर कुछ पाश्चात्य लोग यह कलंक करते हैं कि भारतीय लोग नारी जाति का अपमान करते हैं। और कहते हैं :—

ढोल गंवार शूद्र पशु नारी।
ये सब ताड़न के अधिकारी॥

—तुलसी।

पर यह संकेक उस नारी के प्रति है जो सत्य से धिन्षलित है। कर्त्तव्य भ्रष्ट हैं। सती नारी की नहीं, वासना की निन्दा की जाती है। नर-नारी की नहीं। वासना ग्रसा नर रावण की धज्जियां उड़ाने में महात्मा तुलसी दास ने कोई कोर-कसर नहीं रखी।

हमारे इतिहास में दो परम्परा चली हैं। एक यज्ञ की परम्परा, दूसरी व्रत की परम्परा। इन मूल भूत विचार-धाराओं के आधार से आज हमें नारी जाति का इतिहास खोजना है।

पहली विचारधारा के अनुसार यज्ञ में नारी को बड़ा ऊंचा स्थान दिया है। कोई भी यज्ञ बिना पत्नी के नहीं हो सकता। यहां तक कि उसके अभाव में राम को अश्वमेघ यज्ञ के समय स्वर्णमय सीता को राम के पास स्थान मिला। यज्ञ में नारी अवश्य चाहिये, फिर वह प्रतिमा ही क्यों न हो।

अविवाहिता कन्या को पिता की संपत्ति का भाई के बराबर भाग मिलता है। विवाह होने पर वह पति की सम्पत्ति की मालिक बिना रजिस्ट्रेशन के हो जाती है। धर्म-शास्त्र के अनुसार उसका अधिकार वैध है।

यदि वह ब्रह्मचारिणी है तो उसे ब्रह्मवेत्ता बनने का पूरा हक है। वेद, शास्त्र, स्मृति, उपनिषद आदि सभी शास्त्र वह पढ़ सकती है। ऋग्वेद के सूक्त के सूक्त नारी द्वारा उतारे गए हैं।

उषा, इन्द्राणी, वाक् और श्याम इन तमाम देवियों की तरफ आप ध्यान दीजिए। ऋग्वेद में शची, इन्द्रा और इला कौन थी? अब जरा उपनिषदों में आइये। गार्गी, मैमेयी, कात्यायिनी आदि की तरफ भी देख जाइये।

मैं एक उपनिषद की कहानी सुनाने जा रहा हूं। महा-राजा जनक उस ब्रह्मदृष्टा और ब्रह्मवत्तों को एक हजार गायें दान देना चाहता है जो सचमुच ब्रह्मदृष्टि रखने वाले

और ब्रह्म तत्व को जानने वाला हो। हजारों धुरंधर विद्वान इकठ्ठे हुए। ब्रह्मविद याज्ञ वल्क्य भी आये। जब ब्रह्मवेता की परीक्षा प्रश्न आया तब गार्गी परीक्षक बनी ! आप सोच सकते हैं कि परीक्षार्थी से परीक्षक की योग्यता कितनी अधिक होनी चाहिये।

श्री याज्ञ वल्क्य से गार्गी ने प्रश्न किया—

गार्गी—ये ऊपर-नीचे और मध्य लोक में क्या भरा हुआ है

याज्ञ०—आकाश !

गार्गी ने निर्णय दिया कि श्री याज्ञवल्क्य सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म वत्तों हैं। इन्हें एक हजार गायें मिलनी चाहिये। इस प्रकार उपनिषद मे नारी को बहुत सम्मान मिला।

अब जरा पुराणों की और भी आइये। लोपा मुद्रा शवरी, कौशल्या, द्रोपदी आदि की और भी देखिये। नारी के सम्मान में क्या कुछ नहीं किया गया।

यदि राजपूताने का इतिहास आपके सामने रख दूं तो खून खोलने लग जायेगा तुम्हारी रग-रग में जादू घुस जाएगा। कलेजा थामना पड़े उसे सुनने के लिये। है तुममें वह साहस जो तुम उसे सुन सको।

मैं उन क्षत्राणियों की कहानी कहने जा रहा हूँ, जो बलिदान की आदर्श प्रतीक थीं।

बलिदान का प्रतीक परवाना माना जाता है। संसार के सभी शायरों और कवियों ने पतंग या परवाने को लक्ष्य मान करके साहित्य का भण्डार भर दिया।

वे परवाने—

शमा कुछ खबर है तेरे परवाने की।
लाश पर लाश पड़ी है दीवाने की॥

दूसरी तरफ—
दोनों ओर प्रेम पलता है।
सखि पतंग भी जलता है।
और दीपक भी जलता है॥
दोनों ओर प्रेम पलता है।

—मैथिली शरण

जीवन की ज्योत पर नयोछावर होने वालों की कमी नहीं। यह उत्सर्ग कोई असंभव भी नहीं।

परन्तु कवियों जरा उन राजपूताने की वीर क्षत्राणियों को देखो। जिन्होंने बुझी हुई दीप शिखा पर जीवन न्यौछावर कर दिया। धधकती हुई ज्वाला में धंस गईं।

उन्होंने परवाने के बलिदान से भी ऊंचा आदर्श उपस्थित कर दिया।

राजपूताने की यह परम्परा रही है। मैं नहीं कहता कि तुम भी इसी प्रकार जान दे दो। मैं इसे अनुकरणीय भी नहीं कह रहा हूँ। मैं एक सत्य को प्रकट कर रहा हूँ। सत्य के पर्दे उखेड़ना हमारा काम है।

ब्राल्य धर्म में पुरुष की तरह नारी को हक दिया गया है। कि वह पुरुष ही की तरह साधु बन सकती है। वह उपदेश दे सकती है।

एक न्यायाधीश के सामने एक बाई प्रश्न रखती है। मेरा पति स्वर्ग सिधार गया है। मुझे क्या करना?

उत्तर मिलता है—पति ही परमेश्वर है, पति ही में पल है। पति के कारण ही सारे संसार के सुख और वैभव है। इसलिये पति नहीं है। अपने आपको भी नष्ट कर दो।

दूसरी नारी का प्रश्न है। मेरा और मेरे पति का एक नश्वर सम्बन्ध नष्ट हो गया। अब मुझे क्या करना ?

न्यायाधीश उत्तर देता है—पुरुष ही तुम्हारा जीवन नहीं। तुम्हारा जीवन समाज है, तुम समाज की सेवा करो। मनुष्यता की सेवा करो। संसार के अज्ञान को मिटाओ! हर नारी पति के लिए मर जाये यह जरूरी नहीं।

एक बार महारानी लक्ष्मीबाई किसी धर्माचार्य का व्याख्यान सुन रही थी। धर्माचार्य समाज की व्यवस्था पर अपने व्यंग्य बाण छोड़ रहे थे।

हिन्दु नारी का जब तक पति जीता है, काँच की चूड़ी पहनती हैं और पति मर जाता है सोने का चूड़ा पहनती हैं।' यह सुन कर सब दंग रह गए। जनता हंसने लगी।

उस समय स्वतन्त्रता संग्राम की आत्म संचालिका महारानी लक्ष्मीबाई से न रहा गया। उसने कहा—

'महाराज आप इस रहस्य को नहीं समझ सके। यही कारण है कि आप आज नारी जाति का अपमान कर रहे यही कारण है कि—

'जब तक पति जीवित होता है, उसका सम्पूर्ण भार अपने पति पर रखती है। पति का स्त्री के साथ कांच की चूड़ी ही रहती हैं। विश्वास नहीं किस समय टूट जाए। और जब उसका यह नश्वर बन्धन टूट जाता। तब वह अविनश्वर प्रभु-परमेश्वर से सम्बन्ध स्थापित करके अपने अमर अहैवात बनाती हैं। इससे सोने का चूड़ा पहनती है। और अपना एहवात अमर बना लेती है।

मीरा की कहानी यही कुछ तो है।

पति के पीछे मर जाने का भी एक दृष्टि कोण रहा है। जब युद्ध का वातावरण हो। शासन व्यवस्था डावाडोल हो। सभी को अपने धर्म रक्षा में असमर्थता हो, तब उसे अग्नि स्नान के सिवा क्या रास्ता हो सकता था। सभी यदि दूसरे के हाथ में पड़ जायें तो सतीत्व भ्रष्ट होने के साथ ही राष्ट्र के कई गुप्त भेद प्रगट हो जाने की सम्भावना थी वर्ण संकरता फैलने का अंदेशा था। और यही कारण था कि अन्य मार्ग नहीं रहा था।

परिस्थिति वश कर्त्तव्य निर्धारित होते हैं। नारी का समाज और संसार के प्रति भी कुछ कर्त्तव्य है। वह वैधव्य के बाद और भी बढ़ जाती है।

ब्राल्य धर्म का आदर्श यही रखा गया है। जीवन के विकास का नाम धर्म है। समाज के अज्ञानधंकार को दूर करना नारी का कर्त्तव्य है।

लोपा मुद्रा से आज तक की नारी का इतिहास देखो। भगवान आदि नाथ की दुनिया ब्राह्मनी और सुन्दरी साध्वी बनी। आप पूछेंगे क्या लाभ हुआ।

उन्होंने भरत और बाहुबलि का झगड़ा मिटाया। बाहुबलि ने निश्चय किया कि भरत की जमीन पर पैर नहीं रखूंगा। केवल अंगूठे के बल खड़े रह कर घोर तप किया। एक वर्ष व्यतीय हो गया। ब्रह्मा दर्शन की चाह थी पर ब्रह्मा दर्शन नहीं हुआ। अंहकारी को ज्ञान कैसा। न भूतो न भविष्यति। ब्रह्मा और सुन्दरी ज्ञान देने को जाती हैं। कहती हैं–

भैया मोरे गज थकी उतरो!

बहन की आवाज भाई कैसे नहीं पहचानता ? सोचा बहने दीक्षा ले चुकी हैं। असत्य भाषण कभी नहीं कर सकतीं। क्या कारण है कि जो मुझे कह रही हैं–भैया हाथीं से उतरो। मैं किस हाथी पर बैठा हूँ। विचार आया। मैं अहंकार के गज पर सवार हूँ। मेरी भूल है। संतो को अभिमान कैसा। और ब्रह्म ज्ञान प्रगट हो गया आत्म साक्षात्कार हो गया।

अहिंसा धर्म की प्राण प्रतिष्ठा में नारी जाति का बहुत बड़ा हाथ है। यदि मैं कहूँ कि भारत में जो धर्म कायम रहा है उसका श्रेय अधिकांश देवियों को है। पुरुषों को नहीं।

महात्मा श्रद्धानंद की कहानी पढ़ो। उन्होंने स्वयं लिखा है। मेरी बुरी आदत थी। मुझे श्रद्धानन्द बनाने का सारा श्रेय मेरी धर्म पत्नी को है।

मेरा विवाह हो गया। हिन्दू पत्नी पति के भोजन करने पर भोजन करती है। वह भोजन नहीं करती चाहे दस दिन व्यतीत हो जायें।

एक बार मैं बाहर से घर की ओर आ रहा था। रास्ते में यार दोस्त मिल गये। घर ले गये। एक प्याला पीने का आग्रह किया। मैंने इन्कार किया। दोस्त जो ठहरे न मानो। मजबूर कर दिया। केवल एक प्याला पियो–फिर जिन्दगी भर मत पीना। पीना पड़ा। पी गया। फिर क्या था। पीता गया। और मदहोश हो गया। पैर डगमगाने लगे। वैश्या के घर ले जाया गया। रात को तीन बजे ठोकरें खाता हुआ घर पहुँचा। मन में आया किस नापाक

चक्कर में फंस गया । बीबी का ख्याल आया । रात के तीन बजे हैं । नौकर मुझे ऊपर ले गया । वह देवी-श्रद्धा की साकार प्रतिमा मेरे पलंग के पास मेरी प्रतीक्षा में बैठी है । मुझे बिस्तर पर लिटाया । उल्टी हुई जिसे उसने अपने हाथों से साफ किया । मुझे कुछ होश आया । देखा-वह मेरे पैर दवा रही है । मैंने पूछा तुमको मुझसे घृणा है । उसने कहा-आपसे घृणा कैसी ? वह दूध में मिश्री डाल कर लाई । और पिलाने लगी । मैंने पूछा-तुमने पिया ? उसने कहा-जब तक आप नहीं पी लेते मैं कैसे पीती ।

मेरा दिल पानी पानी हो गया । मुझे पश्चाताप हुआ और निश्चय किया कि भविष्य में ऐसी भूल नहीं करूंगा ।

मैंने अपने सारे दोष खुल कर उसके सामने रख दिये । उसने कहा-पति क्या करता है-क्या नहीं करता है-यह देखने का काम मेरा नहीं है । मैं तो आपकी दासी हूँ । मेरा जीवन आपके चरणों में अर्पित है । यह सुन कर मैं तो और भी हैरान हो गया । मैंने कहा-तू मेरी गुराणी है । सचमुच तुने मुझे बचा लिया ।

यह है हिन्दू देवी का आदर्श । यह है हमारे इतिहास का देदीप्यमान पृष्ट । जिस पर हमें गर्व है ।

उदयसिंह की रक्षा का भार सिर पर लाद कर पन्ना बाई ने अपने पुत्र को-अपने हृदय के ठुकड़े को बलिदान की वेदी पर चढ़ा दिया । पन्ना ने एक भी आंसू न बहाते हुये बलवीर की लपलपाती तलवार द्वारा अपने पुत्र के टुकड़े-टुकड़े होते देखा । भारतीय नारी के हृदय की बात

कर रहा हूँ। उस पन्नाबाई ने मेवाड़ के महाराणा की रक्षा में पहली आहुति दी।

गुप्त मार्ग से उदय सिंह को लेकर आशाशाह के पास है। आशाशाह बलवीर की क्रोधाग्नि को जानता था। वह जानता था कि बलबीर को पता चल गया तो वह जालिम जिन्दा जला देगा। उसने भय से भयभीत होकर शरणागत उदय को शरण देने से इन्कार कर दिया। पन्ना का हृदय बांध टूट गया। आशा से जो आशा थी वह निराशा में परिणत हो गयी।

पन्ना निराश होकर आशाशाह की मां से मिलने गई। उसने अपनी हृदय कथा माँ को सुनाई । मां-मां के हृदय को ज्यादा पहचानती है । उसन पन्ना को आश्वासन दिया।

आशाशाह भोजन के लिए घर में आया। भारतीय संस्कृति के अनुसार बनिये मां को प्रणाम करते हैं । आशाशाहा ने प्रणाम किया । मां के तन बदन में आग लग गयी। बोली--

कायर पुरुष! धिक्कार है तुझे । निकल जा मेरे सामने से। मैं तेरा मुंह देखना नहीं चाहती।

आशाशाह हक्का बक्का हो जाता है। सोचता है मैंने क्या किया। बड़ी नम्रता से प्रार्थना करता है। माता जी मेरा क्या कसूर है ?

मां ने कहा-मूर्ख ! तू कहता है मेरा क्या कसूर है। देख उस पन्ना की तरफ-जिसने अपने मालिक की रक्षा के लिए अपने पुत्र को बलिदान कर दिया । विश्व के

इतिहास में एक अनूठा उदाहरण उपस्थित कर दिया। और एक तू कायर कहीं का–तू पैदा हुआ जिसने शरणागत को ठोकर मार कर हटा दिया। इससे तो अच्छा था मैं बन्धया ही रहती–नीपूती रहती तो यह कलंक तो मुझे नहीं लगता।

भाई जणे तो एहागण, के दाता के शूर।

नीतो रीजे वाझणी मती गंवाजे नूर॥

आशाशाह बच्चे 'उदय' को अपनी गोद में लेता है। और उसकी प्राणपण से रक्षा करता है।

यह है मातृ जाति की ललकार। मातृ जाति की शिक्षा। एक मां सौ शिक्षक के बराबर होती है।

वेदों में लिखा है–मातृ देवो भव। हम मां की कितनी कदर करते हैं।

सती कहते किसे है। इसे हम नहीं जानते। केवल आग में जल जाने का नाम सती नहीं है। सतियां बनाई नहीं नहीं जातीं। सतियां होती हैं।

सती की परम्परा आपने सुनी। पर किसी स्त्री के पीछे सत्ता होने की बात भी सुनी ?

क्या यह एक अहंकार नहीं। कुराफाती नहीं ? पति के मरने पर पत्नी सती बने। और आपका–आप पुरुषों का कोई कर्त्तव्य नहीं ?

ब्राह्मण लोग स्वर्ग का सर्टिफिकेट देते हैं। स्वर्ग में सब कुछ मिल जाने का विश्वास दिलाते हैं।

पोप भी इसी प्रकार की चिट्ठियां देता था। और सर अगारंक तो आज भी चिट्ठियां देते हैं। जो कुछ वहां

चाहिये–यहां दे दो वहां मिल जायेगा । गोया ये लेटर बाक्स हैं–जो स्वर्ग तक पहुँचा देते हैं ।

लाखों लोग यहां सती के दर्शन करने आये । ये लोग क्या हैं–क्यों न इन्हें मनुष्य के हत्यारे कहा जाये । जो दिन रात ये इच्छा करते रहते हैं कि कब मरें । कब मरें । और सती हों ।

यदि सरकार उन विचारों की रक्षा न करती तो ये लोग जरूर उसको मार डालते और उस स्त्री को फूंक देते ।

ऐसे सती नहीं होती । सती देखना है तो चलो । दुर्योधन की मां गांधारी को देखो । पति अंधा है–अतः उसने अपनी आँखों पर पट्टी बांध रखी है । दुर्योधन युधिष्ठिर के पास आता है । युधिष्ठिर धर्मराज ठहरे । उन्हें राजनीति के प्रयचर्स क्या मनडप–उनसे दुर्योधन ने पूछा–भीम ने मेरी गदा द्वारा हत्या करने का फैसला किया है । कृपा करके ऐसा उपाय बताईये कि जिससे मैं बच सकूं ।

युधिष्ठिर ने कहा–इसमें क्या बड़ी बात है । तुम अपनी मां के सामने खड़े हो जाओ । जिस अंग पर तुम्हारी मां की दृष्टि पड़ जायेगी–वह व्रज का हो जायेगा ।

युधिष्ठिर की बात सुनकर दुर्योधन चल दिया । अजेय बनने के लिये । कृष्ण को पता चला । कृष्ण ने कहा–अरे दुर्योधन अब तू कोई बच्चा नहीं है–जो मां के सामने नंग धडंग खड़ा हो जायेगा । जरा, कौपीन तो पहन ले । और उसने कौपीन का उपयोग कर लिया ।

आप लोग सोचेंगे दृष्टि से शरीर व्रज का हो जाता है। यह केवल गपोड़ें हैं। पर आपको मालूम है—कलियुगी राम मूर्ति जो मोटरों को रोक सकता था। जो हाथी को सीने पर चढ़ाता था। चालीस पैंतालीस नम्बर की श्रंखल तोड़ता था। वह मां का आशीर्वाद ही लेकर जाता था।

मां खून का दूध बना देती है। वैज्ञानिकों ने मशीन की गाय बनायी। पर वे दूध न बना सके।

अंत में मैं इतना ही कहूँगा कि नारी जाति का गौरव बहुत ऊंचा है। उसे पुनः वैसा ही रखने के लिए माताओं को कटिबद्ध होना है।

३ : वाणी की महिमा

आज तो हमारे ईश्वर स्वरूप कृष्ण भगवान ने एक बड़ी मार्मिक बात कह दी। वह कही है 'निंदा की'। मनुष्य ने अपनी वाणी की शक्ति के बल को नहीं समझा। वाणी के एक शब्द में वह जादू है, वह चमत्कार है जिसका अनुभव आने पर ही उसके गांभीर्य का पता चलता है।

भगवान महावीर, भगवान पार्श्वनाथ, महात्मा बुद्ध, आचार्य समंत भद्र और सिद्धसेन दिवाकर ने हमें क्या दिया ?

भगवान का शरीर बड़ा सुन्दर था। उनके २४ अतिशय थे। वे बड़े दानी थे। पर आपको विरासत में क्या मिला। वह क्या वायु है, जिस पर आज हम भगवान महावीर पर गर्व करते हैं। और उनको श्रद्धा के पुष्प चढ़ाते हैं। क्या चीज है वह, जो आज हमारे रोम से फूट रही है? क्या वायु है वह जिसे स्मरण करके हम आनन्द विभोर होकर मन मयूर की भांति थिरक उठते हैं।

हमारे माता-पिता विरासत में धन, सम्पत्ति, जायदाद, रिश्तेदारी और भाई चारा दे जाते हैं। नेता विचार दे जाते हैं। पर भगवान महावीर क्या दे गये ?

वे बिहार के रहने वाले थे। पर वे स्वयं धन दौलत को छोड़कर घर से निकल गये। एक कपड़ा बचा था, जिसे दोव दूष्प कहते हैं। उसे आधा फाड़ कर याचक ब्राह्मण को दे दिया, आधा टुकड़ा किसी झाड़ी में उलझ कर रह गया। भगवान नग्न बन गये।

एक सामुद्रिक जो रेखा ज्ञान का पारगामी पण्डित आता है। मार्ग में धूलि पर अंकित रेखाओं को देखकर विचार करता है कि–इस मार्ग से जाने वाला व्यक्ति कोई महान चक्रवर्ती होना चाहिये। इसकी शरण में जाने से अपन निहाल हो जायेंगे।

यह सोच कर पदानुसरण करता हुआ सामुद्रिक उस जगह पहुँचा जहां भगवान समाधिस्थ थे उसने सोचा यह नंग धड़ंग क्या चक्रवर्ती बनने के योग्य है। मुझे धिक्कार है जो ऐसे सामुद्रिक शास्त्र पर विश्वास कर लिया। अच्छा हो इस शास्त्र के गट्ठर को समुद्र में डाल दूं।

आवेश में आया हुआ वह सामुद्रिक शास्त्रों को पानी में फैंकने ही वाला था कि 'इन्द्र' ने आकर रोका और कहा– भाई तेरा सामुद्रिक शास्त्र झूंठा नहीं है। ये साधारण चक्रवर्ती ही नहीं, पर चक्रवर्ती और इन्द्र के भी गुरु हैं। इनके वैभव की बात मत पूछ। ६४ इन्द्र इनकी सेवा में तत्पर रहते हैं। ये त्रिलोक के स्वामी हैं।

उसने भगवान की सेवा की और मिला। पर आपको और हमको क्या मिला ?

हमें मिली है भगवान की वह अमर वाणी जो आज २५०० वर्ष के बाद भी उतना ही चमत्कार रखती है।

आज भी वह वाणी हमारे रोम-रोम में जादू का असर करती है। हमें आनन्द विभोर बनाती है। एक-एक शब्द में अनन्त आनन्द भरा हुआ है।

शब्द शक्ति अभिन्न है। आप यह न समझें कि शब्द से क्या होता है? जरा, महाभारत का इतिहास देखिये। द्रोपदी ने एक शब्द कहा था–'अन्धे की सन्तान अन्धी ही होती है।'

इस व्यंग्य वाक्य ने संसार में तहलका मचा देने वाला महाभारत खड़ा कर दिया। लाखों मनुष्यों के सिर धड़ से जुदा हो गये। लाखों मासूम बच्चे अनाथ हो गये। लाखों बहनों का सुहाग सिन्दूर बह गया। यह है शब्द की शक्ति वाणी की महिमा।

वाणी अमृत की कुंभी है और वही युद्ध की चिनगारी भी बन जाती है। संसार की शान्ति और अशान्ति हमारी जबान पर ही निर्भर है।

जबान को जीत लेने से संसार के सब दुःख टल जाते हैं। जबान को जीतने से झगड़ों का अन्त होकर शांति होती है, दूसरी ओर कोई भी रोग नहीं होने पाता।

हम जानते हैं–मिठाई पेट के लिये अत्याचार है, फिर भी जबान पर नियन्त्रण नहीं होने से 'शरीर व्याधि मंदिरम्' बन जाता है।

आज आपके न तो खाने में न बोलने में कन्ट्रोल है।

महात्मा गाँधी का कहना था कि जो खाने पर कन्ट्रोल नहीं कर सकता, वह ब्रह्मचर्य का पालन भी नहीं कर सकता।

आयुर्वेद में तो यहां तक कहा है कि–

पथ्ये सति गदार्तस्य,
किमौषध निषेवणैः ।
पथ्येऽसति गदार्तस्य,
कि मौषंध निषेवणैः ॥

पथ्य रखने पर रोगी के औषध खाने की आवश्यकता ही नहीं, क्योंकि वह स्वयं स्वस्थ हो जायेगा। और यदि पथ्य नहीं रखा तो फिर औषध खाना व्यर्थ है, क्योंकि उस के स्वस्थ होने की आशा निराशा मात्र है।

लेकिन इस महत्व को कौन समझे और समझावे। वाणी का महत्व निराला है। वाणी का दुरुपयोग केवल आप की ही हानि नहीं करेगा परन्तु वह समाज और देश को ले डूबेगा। शरीर का दुरुपयोग तुम्हीं तक सीमित रहता है। मन का दुरुपयोग भी अपने आप तक सीमित रहता है। पर वाणी के दुरुपयोग ने संसार में भीषण ताण्डव खड़े कर दिये हैं। ये भयानक युद्ध, जिसने सारे संसार को धधकती ज्वाला में झोंक दिया। इसी वाणी का दुरुपयोग था।

आपकी वाणी सुन्दर और पवित्र हो तो फिर झगड़े और अविश्वास का काम ही क्या ?

आप लीलोतरी के त्याग लेते है, लीजिये, पर जब तक आप अद्धमान, माया, लोभ आदि कषायों का त्याग नहीं करते, आपके सब त्याग वृथा चले जायेंगे।

निन्दा वाणी का भयंकर दुरुपयोग है। सत्य स्वाध्याय आदि वाणी के सदुपयोग है। वहां निंदा विकथ्य दुरुपयोग है। वाणी का दुरुपयोग समाज का घातक है।

प्रमत्त योगात्प्राण व्यपरोपण हिंसा ।

प्रमाद के योग से किसी प्राणी के प्राणों का हनन हिंसा है। वैसे तो न कोई मार सकता है, न बचा ही सकता है। आयष्प बढाने की स्वयं भगवान में शक्ति नहीं।

इन्द्र ने आकर भगवान महावीर से प्रार्थना की कि यदि आप अपनी मृत्यु को २ घड़ी आगे बढ़ायें तो भस्मग्रह ढह जायेगा। इस पर भगवान महावीर फरमाते हैं कि संसार के तमाम मानवों से मेरी शक्ति अधिक है, पर एक सांस की आयु बढ़ाने की शक्ति मुझमें नहीं।

हम किसी जीव को बचाते हैं, वह हम उसकी आत्म समाधि का प्रयत्न करते हैं। उसे आर्त रौद्र ध्यान से बचाते हैं। उसे अभय दान देते हैं। यही धर्म है। असंयति के जीवन को बांध्य नहीं करता, यह सैद्धांतिक विरुद्ध जिसका हम विरोध करते हैं। यह निंदा नही ?

अभी मुझे एक 'विस्फोट' नाम का पर्चा देखने को मिला यह भी सुनने में आया है कि इसमें हमारा हाथ है, ऐसा कहा जाता है। परन्तु मैं जाहिर कर देना चाहता हूँ कि मैं ऐसी पम्फलेट बाजी का घोर विरोधी हूँ ! मैंने आज तक ऐसे कार्यक्रम को रोका है। चर्चा का मार्ग खुला है। पर्चा का नहीं। हमारा सैद्धांतिक मतभेद है। वह चर्चा से दूर किया जा सकता है।

वादे-वादे जायते तत्व बोधेः

हम मतभेद को चर्चा से, प्रेम से मिटाना चाहते हैं निंदा से नहीं।

एक महात्मा ने १०० वर्ष के अनुभव के बाद मरते-मरते अपनी डायरी में एक लाइन लिखी-

निंदा करो, स्तुति करो !

निंदा करना और स्तुति करना मत छोड़ो। क्योंकि वे शून्य हैं। विधेयात्मक काम करो। पर उनका क्रम बदल दो। आप अपने दोषों की निंदा करो और दूसरों के गुणों की स्तुति करो।

हम कहते हैं-प्रभु ! मेरा ध्यान तेरे गुणों में हो।

शरीर में नहीं। शरीर में ध्यान रखने वाले गौतम जो महावीर के में ममत्व रख रहे थे, केवल ज्ञान से वंचित रहे। हमारा ध्यान प्रभु गुण से हो।

निन्दा अपनी करो,

स्तुति गुणों की करो।

प्रभु की वाणी को, आत्मा की शक्ति को निन्दा में नष्ट न करो। निन्दा भूल है। दुखदायी है। जीवन को बरबाद करने वाली है।

एक साहूकार के पास एक नौकर नौकरी के लिये आया। उसने सेठ से अर्ज की कि-सेठ साहब, मैं नौकरी चाहता हूँ, आप मुझे नौकर रख लीजिये।

आजकल सेठ लोग नौकरों के लिए आधीन हो गये हैं। यहां तक कि भोजन तक नौकर बना कर खिलाते हैं। कभी कभी तो वे नौकरों को कह देते हैं—महाराज आवें तो दो रोटी दे देना ! मैं ऐसी जगह कभी गौचरी करने नहीं जाता।

हम लोग आहार लाते हैं। आप लोग श्रद्धा भक्ति से

देते हैं, उसमें आपको और हमको निर्जरा का लाभ होता है। पर जहां बे-दरकारी होती है, वहां लाभ का अंश भी नहीं रहता। खैर!

मैं नौकर की बात कर रहा था। सेठ जी को नौकर की जरूरत थी। सेठ जी ने पूछा—

'भाई दिन भर काम करना करना होगा—तुझे मन्जूर है?'

'सेठ साहब दिन के २४ घण्टे होते हैं। यदि ३६ घण्टे भी होते तो मुझे एतराज न होता।'

सेठ जी बड़े खुश हुए। नंगे सिर खुदा मिला। उन्होंने पूछा—'अन्य कोई शर्त तो तेरी नहीं है?'

नौकर ने बड़े ही संकोच से कहा—'सेठ साहब! मेरा पेट ४-६ महीने में अफर जाता है, तब मैं केवल ६ मास में एक दिन निन्दा करता हूँ, सो यदि मैं ६ मास में एक बार निंदा करूं तो आपको बर्दाश्त करना होगा।'

सेठ जी ने सोचा हम तो रोज-रोज निन्दा करते रहते हैं, यह बिचारा ६ मास में एक बार निन्दा करेगा, क्या हानि है? ऐसा नौकर फिर कहां मिलेगा। नौकरी पक्की हो गई।

छः महीने हो गये सेठ-सेठानी की सेवा करते-करते। रामू सेठ की मूछ का बाल बन गया। सेठानी जी तो उसे पुत्रवर प्यार करने लगी। क्योंकि वह आराम समझता था। काम प्यारा है, चाम नहीं। एक दिन रामू सेठानी के पास बिलकुल उदास होकर बैठ गया।

सेठानी जी के होश खट्टे हो गये। क्या बात है रामू?

बीमार पड़ गया तो घर का काम चौपट हो जायेगा। बड़े प्यार से बोली।

'रामू क्या बात है···आज बड़ा उदास दिख रहा है ?'

'मत पूछो सेठानी साहेब, आप सुन न सकोगी।' रामू ने कहा।

'कह भी रे···क्या बात है ?'

'सुनना चाहती हैं आप तो लीजिये सुनिये। आज मैं सेठ जी की जन्म पत्रिका ज्योतिषी जी के पास ले गया था, उन्होंने कहा कि तुम्हारा सेठ पिशाच है, एक दिन सेठानी को खा जायेगा।'

'अरे मूर्ख ऐसे सज्जन सेठ पर तोहमत लगाता है। वे तो पूरे देवता स्वरूप हैं।' सेठानी बोली।

'इसीलिये मैंने कहा था कि आप न पूछो। आपको विश्वास ही न आयेगा। यदि आपको विश्वास न हो तो सेठ जी का बदन चाट कर देख लो। यदि आपको खारा लगे तो मेरी बात मान लेना।' रामू ने सफाई पेश की।

अन्त की बात सेठानी को जंच गई।

× × ×

रामू घर से उठ कर दूकान पर गया। मुंह लटका कर सेठ जी के पास बैठ गया। सेठ ने सोचा आज रामू पर क्या संकट आ गया है। पूछा-

'रामू ! आज क्या बात है ? बड़ा उदास दीख रहा है। क्या हो गया है तुझे ? यदि कोई बीमारी हो तो उसका

इलाज करा ले ।'

रामू ने अवसर देखकर कहा–

'सेठ साहब कुछ न पूछिये ! आप विश्वास भी नहीं करेंगे । मैं आज ज्योतिषी के पास गया था, वहां मैंने सेठानी साहब की जन्म पत्रिका बतलाई तो उन्होंने कहा कि तुम्हारी सेठानी पिशाचिनी है । ऐसा न हो कभी सेठ को खा जाय।'

अपने विश्वस्त नौकर के मुंह से यह बात सुनकर पहले तो हैरानी हुई, फिर कहा–'मूर्ख, देवता स्वरूप सेठानी पर ऐसा कलंक लगाते शर्म नहीं आयी !'

रामू ने कहा–'यह तो में पहले ही जानता था कि आप मेरी बात नहीं मानेंगे । पर, जब वह आपको खाने लगेगी, तब स्वयं आपको विश्वास हो जाएगा !'

सेठ जी भी विचार-मग्न हो गये । रात को सेठजी को नींद बहुत आ रही है, कहकर सो गये । २-३ घण्टे हो गये । पर नींद नहीं आई केवल खर्राटें भरते रहे ।

दूसरी तरफ सेठानी यह देख रही थी कि कब नींद आवे जांच की जाए ।

सेठानी ने पीठ का कपड़ा उठाकर चाटना शुरू किया । सेठ जी चौंक कर उठ खड़े हुए और बोले, राण्ड सचमुच पिशाचिनी है, तब सेठानी ने भी कहा–सचमुच सेठ पिशाच है । बिलकुल खारा ।

सेठ जी ने धक्का देकर सेठानी को घर से बाहर निकाल दिया । कोहराम मचा, रात भर परेशानी में बीती, सुबह लोग इकट्ठे हुए और फैसला होने लगा ।

रामू ने बड़ी नम्रता से निवेदन किया कि साहब मेरी

शर्त थी कि ६ मास में एक दिन निन्दा करूंगा। सो मैंने आपकी झूंठी निन्दा की है, न आप पिशाच हैं न सेठानी पिशाचिनी'

एक दिन की निन्दा का यह असर हुआ कि सेठ-सेठानी की इज्जत खाक में मिल गई।

जो लोग प्रतिदिन निन्दा करते हैं, उनके द्वारा होने वाले अनर्थ का जरा हिसाब लगाकर तो देखिए।

इसीलिये भगवान ने फरमाया कि–

पिट्ठी मंस में खाइज्जा।

पीठ का मांस न खाओ अर्थात निन्दा मत करौ!

संसार में सबसे कठिन उदारता है। एक बार महात्मा बुद्ध के सामने एक व्यक्ति आया। महात्मा बुद्ध का यश बहुत फैला हुआ था, वह उसे सहन न कर सका। उसने महात्मा बुद्ध को हजारों गालियां सुनायीं। सुनाते-सुनाते जब वह थक गया, तब बुद्ध ने कहा–एक बात मैं पूछ सकता हूँ :–

उस व्यक्ति ने कहा–

'पूछिये!'

एक महात्मा किसी दाता के घर गये। दाता ने वस्त्र, कम्बल, सोना, जवाहरात आदि बहुत सी वस्तु महात्मा को भेंट की।

जब महात्मा ने उनकी कोई आवश्यकता नहीं समझी तब कह दिया–

'भाई मुझे तुम्हारी भेंट स्वीकार नहीं।'

हे मानव ! बना वह सब सामग्री किसकी रही । महात्मा की या दाता की ?

मानव–दाता की !

ठीक इसी प्रकार अभी जो गालियां तुम्हारी ओर से हमें भेंट स्वरूप प्राप्त हुई हैं, वे हम स्वीकार नहीं करते। अब बताओ यह भेंट किस मालिक की रही ?

तात्पर्य यह कि जो निन्दक निन्दा करे आप स्वीकार मत करो। आपका कुछ नहीं बिगड़ेगा।

आशा है आप वाणी के महत्त्व को समझेंगे। वाणी की भयंकरता और उसके महत्त्व को समझ कर यदि आप वाणी का सदुपयोग करेंगे तो संसार से कलह मिट कर अपूर्व प्रेम प्रवाह बह चलेगा !

४ : शिक्षा का उद्देश्य

संसार की सभी सरकारें, संसार के सभी धर्म और संसार के सभी के सभी समाज शिक्षा के महत्व को बल लाते हैं। शिक्षा के अधिक से अधिक प्रभार में अपना गौरव समझते हैं। किसी भी सरकार, धर्म, गुरू या समाज का महत्व इसी बात से आंका जाता है कि उसके पास साक्षर कितने हैं।

आठ-दस दिन पूर्व हरिजनों का एक प्रतिनिधि मण्डल श्री दाले साहब के नेतृत्व में आया था। उन्होंने कहा महाराज हरिजनों ने दो सौ वर्ष में इतनी उन्नति की, कि आज उसके पास सौ लड़के मैट्रिक पास हैं।

तात्पर्य यह है कि हमारी उन्नति और अवनति का मापदण्ड भी शिक्षा ही मानी जाती है।

मराठा जाति बड़ी उन्नत है। पूछा क्यों ? तो उत्तर मिला कि इनकी लड़कियां भी शिक्षिता हैं।

वह सरकार निष्क्रिय और कर्महीन है जो शिक्षा के महत्व को नहीं समझती।

शिक्षा के सम्बन्ध में नहीं कह रहा हूं। शिक्षा का उद्देश्य बता रहा हूं। शिक्षा का अर्थ बम्बई आदि की ओर

'दण्ड' माना जाता है। कुछ लोग शिक्षा का अर्थ दान करते हैं।

कहिये हमें क्या लेना-देना है। शिक्षा का अर्थ नहीं उद्‌देश्य बताना है।

जिस शिक्षा के लिए सारा संसार इतनी दौड़धूप कर रहा है। आखिर उसका उद्‌देश्य क्या है?

सबसे पहले हम तत्व चिन्तक की तरफ आते हैं। उन्होंने संसार के सामने अन्तिम रहस्य को खोल कर रखा है। तत्व चिन्तक दो धाराओं में विभक्त है। पूर्व की, पश्चिम की।'

पूर्व की धारा के तत्व चिन्तकों ने धर्म का उद्‌देश्य मोक्ष सिद्धि माना है। एशिया के किसी भी धर्म को देख जाइये नबका एक ही उद्‌देश्य है 'मुक्ति' वे लोग शिक्षा का उद्‌देश्य भी मुक्ति लाभ मानते हैं। धर्म का अमृत आदि उद्‌देश्य मुक्ति है।

जैन, वैदिक, बोद्ध, इस्लाम आदि यह मानते हैं कि जो मुक्ति में सहायक हो वही शिक्षा है। यह एक हल है।

इस उद्‌देश्य से पाश्चात्य लोग पूरे सहमत नहीं। उन्होंने अन्तिम ध्येय मुक्ति नहीं माना। बहुत से लोग 'सुख' को अन्तिम ध्येय मानते हैं। उनका उद्‌देश्य है जो दुःख का नाश करे वह शिक्षा है।

कुछ ऐसे विचारक हैं, जो यह कहते हैं कि जो तत्व अनुभव करता है वह आत्मा है। शरीर मन इससे परे जो तत्व है उसको जो पहचाने वह शिक्षा का उद्‌देश्य है।

कुछ लोग शिक्षा का उद्‌देश्य नीति का प्रचार मानते

हैं। वे नीति का प्रचार चाहते हैं कि नीति के बिना काम नहीं चलता।

धर्म के मानने वाले धार्मिकों ने मुक्ति को संसार के बाहर वसह बना दिया। संसार छोड़े बिना उसकी प्राप्ति कठिन है। तो नीति शास्त्रियों ने कहा पुत्रेशणा, वित्रेषणा आदि से सर्वथा मुक्त नहीं हुए लोगों के लिए। नीति ही शिक्षा का उद्‌देश्य ठीक है।

एक दिन था जब नीति धर्म के अनुकूल रह कर धर्म ही का अनुसरण करती थी! धर्मों ने सम्प्रदाय की कट्टरता स्वीकार की, परिणाम यह हुआ कि नीति अनीति हो गई।

शिक्षा का उद्‌देश्य सदाचार और शुद्धाचार भी माना जाता है। बहुत से मत हैं।

पांच-चार मत सांख्य से कणाद तक के तत्व चिन्तकों के मत मैं आपके सामने रख चुका।

आज हमें इस जमीन पर बैठ कर विचार करना है।

हम उनसे सहमत नहीं जो शिक्षा का उद्‌देश्य मुक्ति बना कर एकान्त विरिष्ट में रहने और जंगल में जाकर बैठ जाने का आदेश देते हैं। हम उनसे भी सहमत नहीं जो केवल नीति मत्ता को शिक्षा का उद्‌देश्य बनाना चाहते हैं। न हम उनके ही मतय देना चाहते हैं जो केवल सुख के लिये ही शिक्षा का उद्‌देश मान बैठे हैं।

आज हमें विचारपूर्वक इनका समन्वय करना है।

मैं आज आपके सामने अपना हृदय खोल कर रख रहा हूँ। आज से २२०० वर्ष पहले उत्पन्न हुए उस महात्मा की ओर ले जाना चाहता हूँ, जो सुदूर दक्षिण में पैदा हुआ।

जिसको मां मछियारी और बाप ब्राह्मण था। उसे जैन वैष्णव बनके सब अपना धर्म गृरू मानते हैं। उसे वैष्ण गुरु-लल्सवर और जैन कुच्छ-कुछ कहते हैं। दोनों एक ही थे। ऐसी मान्यता है. कुछ लोग दोनों को भिन्न मानते हैं। महापुरुष एक विश्व पुरुष होता है और जब ऐतिहासिक प्रमाणों का अभाव हो जाता है। तब प्रायः ऐसा हुआ ही करता है।

कुछ भी हो हमें उनकी एक पुस्तक 'त्रिकुदर' पढ़ने को मिली।

दो वर्ष पूर्व शिला के सम्बन्ध में 'दी प्राफेट' को नीति का सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता था। जो खलील जिब्रान ने लिखी है। लेबनान का वह रहने वाला था, सीरिया से उसे निकाल दिया गया। उसने अमेरिका में शरण ली और इस अमर साहित्य को प्रस्तुत किया।

मैंने उसे पढ़ा। आनन्द विभोर हो गया। सोचा लेबनान की जमीन भी ऐसी सुन्दर रचना देने वालों को जन्म देती है।

कुछ महीनों बाद मुझे 'त्रिकुदर' पढ़ने को मिली। उसमें एक-एक विषय पर विचार व्यक्त किये गये हैं। एक प्रकरण शिक्षा है। वह कहता है मुझे एक-एक अक्षर एक-एक शब्द बड़े अनुभव के बाद लिखित मालूम हुए। मनुष्य की दो आंखें हैं। जीती जागती दो आंखें वे क्या? एक अंक! दूसरी अक्षर! अंक और अक्षर जिसके पास हों। उसके सामने सारा का सारा वागमय दृष्टिगोचर हो जाता है। सारे अनुभव अक्षर और अंक द्वारा प्रकट किये जाते हैं।

बुद्धिमानों के पास ये दो आंख होती हैं। उसी को ज्ञानी आत्मदृष्टा कहा जाता है।

जो बुद्धिहीन होते हैं, उनके माथे में दो गड्ढें होते हैं– एक आग्रृत दूसरा मूर्खता।

अंक पूरा विश्यन हैं। जिसमें किसी प्रकार के संदेह की आवश्यकता नहीं। विश्व के किसी भी कोने में चले जाईये। दो और दो चार ही होंगे। पांच नही। आपकी आत्मा अक्षरों में छिपी है। परिपूर्णता में अंकहीन और अक्षरहीन पहुँच सकते हैं। पर वह मनुष्य की पराकाष्ठा है।

अंक और अक्षर का उद्देश्य अंक हीन बना देना ही तो है। अनक्षर और अनंक ही अन्तिम लक्ष्य है। यही उद्देश्य है। दादरा लगाया जाता है। वह कहां तक। दादरा जमीन पर रह जाता है। आप ऊपर पहुच जाते हैं। वहां दादरा नही अंक और अक्षर नहीं रहते।

वह कहता है क्या मिलता है शिक्षा मे–

शिक्षा से साहस मिलता है। शिक्षा से सौजन्य मिलता है। शिक्षा से दयालुता मिलती है। शिक्षा से कार्य शक्ति मिलती है। शिक्षा ले उदारता मिलती है। शिक्षा से परोपकार करने की भावना मिलती है। शिक्षा से कार्य क्षमता मिलती है। शिक्षा से सहिष्णुता मिलती है। यदि ये गुण किसी भी प्रकार की शिक्षा से मिले तो वह शिक्षा है।

शिक्षा से साहस पैदा होकर अपनी आजीविका चलाने की क्षमता आ जाये तो वह शिक्षा है। संकटों में मुकाबला

करना सिखा दे तो वह शिक्षा है।

लौकिक शिक्षा और अलौकिक शिक्षा। दोनों एक दूसरे की सहायक और पूरक हैं।

कुछ लोग सेवा आदि की लौकिक व्यवतार कह कर उसका फल नहीं मानते हैं। किसी मरीज को निष्क्रिय भाव से औषध देना। लौकिक व्यवहार मानते हैं। फल फल तो होगा लौकिक व्यवहार का। क्रिया का फल अवश्य होता है।

शुभ क्रिया का शुभ फल और अशुभ क्रिया का अशुभ फल।

यदि इसे लौकिक व्यवहार ही मान लिया जाये तो जो व्यापारी झूठ बोलता है, चोरी करता है, उसका भी नहीं होना चाहिये। क्योंकि यह उसका लौकिक व्यवहार है। सांसारिक कर्त्तव्य है।

साठी बुद्धि नाहीं। माता पिता बूढ़े हो गये। काम में गडबड़ करते हैं। लाठी से पीट देते हैं। फल कुछ नहीं। सांसारिक कर्त्तव्य है।

ये सब उनकी भूल है। अच्छी क्रिया का अच्छा फल होता है। अच्छी क्रिया धर्म की सहायक होती हैं। अपने अपने बच्चे की सेवा न सती–समज के अंग केवल एक अंग की सेवा तो है। बच्चा समाज नहीं, पर समाज का अंग तो है। एक घर से संसार नहीं बनता न हम एक घर को संसार कह ही सकते हैं। पर संसार सब घरों का समूह ही तो है

एक सीमा है। इस सीमा को असींम बना देना ही धर्म

है। आपका प्रेम एक बच्चे पर है। वह प्रेम विस्मृत है वह विस्मृत होकर सम्पूर्ण विश्य को आप अपना घर मानने लग जायें यही धर्म है।

आप घर वालों से झूंठ नहीं बोलते। चोरी करके आते हैं पर घर वालों से भेद नहीं छिपाते। यह सीमा फैल कर सारे विश्व तक व्याप्त हो जाये—यही धर्म बन जायेगा। आपघर वालों के सामने सत्य बोलते थे अब विश्व के सामने सत्य बोलते हैं—पहले आप संकुचित आत्मा वाले थे। अब आप विश्वास्या हो गये। अब आप धर्मात्मा हो गये। अपने घेरे को अपने दायरे को बड़ा बना देने का नाम धर्म है। यही तो शिक्षा का उद्देश्य है।

बच्च को मां के थन से दूध पीना सिखाने के लिए कोई स्कूल नहीं चलता। जब वह भोजन करता है—हजारों आदमियों के श्रय का वह उपयोग करता है। जब वह सड़क पर चलता है। हजारों आदमियों के श्रम का उपयोग करता है। वह वस्त्र पहनता है। तब उसका संबन्ध उन श्रमिकों से होता है जो उसका निर्माण करते हैं। जब मानव यह करता तब उसे शिक्षा की भी आवश्यकता होती है।

आपने हजारों लोगों के श्रम का उपयोग किया। बदले में क्या दिया ? चारों ओर से पैसा कमा कर दौलत जमा कर लेना—लेना बहुत और देना कम। यह संकीर्णता हैवानियत है। शिक्षा का उद्देश्य यह नहीं हो सकता।

शिक्षा से शरीर मन और आत्मा का विस्तार है। हर शरीर खाने को मांगता है। ठीक है—आप उसे खाना

दो–लेकिन बाज चील या काग की तरह नहीं–जो कमजोर बच्चे के हाथ से झपट्टा देकर ले जाये। आप किसी कमजोर गरीब को लूट कर खाओ। यह रास्ता नहीं है। यदि ऐसी ही शिक्षा देने से उद्देश्य हो तो ये स्कूल, कालेज और युनिवर्सिटीज बंद कर दो। यह शिक्षा तो बाज बटेर और चील कौवों से मिल जायेगी। इस शिक्षा से संसार जी नहीं सकता। विश्व बन्धुत्व की भावना दूसरे आ नहीं सकती।

अपको बाज और काग नहीं बनना है–आपको गाय भैंस से शिक्षा लेना है। घास खाकर दूध देना है। एक एक कुत्ते को देखो! रोटी खाकर चौबीस घंटे पहरा देता है।

उस महाराणा प्रताप की वह करूणा भरी घटना की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। मेवाड़ का वीर सेनानी स्वाभिमानी का अंग्रइत–मुसीबतो को लांघता हूँ। परीधनता को ठुकराता हुआ–जंगल में रातें गुजार रहा है। अपने तड़पते हुये राजकुमार और राजकुमारी के लिए कुछ अन्न और कुछ घास से बनी हुई अंतिम रोटी एक वन बिलाव उसकी प्यारी बेटी चम्पा के हाथ से छीन कर ले जाता है। महाराणा प्रताप चीख उठते हैं। उनका धैर्य डगमगा जाता है–उनका अभिमान चूर-चूर हो जाता है। गुलामी को गले लगाने का विचार कर लेते हैं।

आप दूसरे को रोटी झपटते हैं। दुसरे के मुंह का दूध पी जाते हैं–क्या आप उनके अंतहृदय को पढ़ने की ताकत रखते हैं। किस पाप के लिए–आप उन्हें प्रेरणा नहीं

देते। जिसके बच्चों की अंतिम रोटी आप छीनते हैं–उससे किस धर्म की आशा करते हैं आप ?

आपदूध पीते हैं। चाहे बाजार से पूरी कीमत देकर लेते हैं–पर क्या कभी आपने विचार किया कि यह दूध किस प्रकार आया। उसके बच्चे को दूध पिलाने के बाद बचा हुआ दुध आपके पास आया क्या ? आप नहीं जानते दुष्ट लोग गाय भैंस के पूंछ लगा कर सब का सब दूध निकाल लेते हैं। वह बेचारी–अपनी हड्डी तक को जर्जर बना लेती है। जिन मित्रों के कपड़े आप पहनते हैं। उनके मजदूरों के लिए आपने क्या दिया ? जिस सड़क पर आप चलते हैं। उन श्रमिकों के जीवन को आपने क्या देखा। जिस पानी को आप पीकर जीवित रह जाते हैं उस पानी जीवों के प्रति आपने कौन सा कर्त्तव्य अदा किया। जिन वृक्षों से अपका जीवन चल रहा है। उनके लिए आपने कौन सी सेवा दी।

निर्णय करलें अपने आपको आप बान की तरह लुटेरे हो या गाय की तरह दातार ? उत्तर दो अपने आपको ?

मैं उन पुलिस और सेठों की सराहना नहीं कर सकता जो गरीब्रों का खून चूंसते हैं। न मैं उन गरीबों का हामी हूँ जो अपने कर्त्तव्य को नहीं समझते।

तुमदानी हो यह मैं नहीं जानता। तुम खून चूंसना चाहते हो। कम से कम देकर अधिक से अधिक काम लेना चाहते हो।

एक तरफ गधा है एक तरफ कुत्ता है–किसे गं ाजा भेजा जाये।

जहां नग्न सत्य होता है, वह जरा कड़वा होता है। तुम अमृत की संतान हो । तुम गौ की तरह कम से कम लेकर अधिक से अधिक देने की वृति को अपनाओगे। घास खाकर दूध दोगे। शिक्षा में यदि आत्म विकास की भावना नहीं मिलती हैं तो वह शिक्षा का उद्देश्य पूरा नहीं करती।

यदि शिक्षा परोपकार वृति जगाती है-जो मनुष्य को नरपिशाच बनने मे बचाती है। वही शिक्षा है।

शिक्षा के दो उद्देश्य हैं।

१. परोपकार जगाना।

२. बुद्धि को जागृत करना।

बुद्धि का काम है विवेक करना। भविष्य की बात को सोच कर उचित कदम उठाना। ईंट पत्थर लकड़ी आदि की तरह जड़ाव से उठना।

यदि बुद्धि से उत्तर देना ही मात्र उद्देश्य मान लिया जाये। और दूसरे को चाहे फरेब में ही डालने का ही मकसद हो तो वह शिक्षा का उद्देश्य नहीं बुद्धि का अतिरक है।

मुझे अकबर बीरबल की बात याद आ गई। एक बार अकबर ने बीरबल से कहा—'बीरबल तुम्हारे गुरू है ?

बीरबल बड़ा सभा चतुर था। उत्तर वेने में बड़ा होशियार था। बादशाह के आशय को ताड़ गया। बीरबल के कोई गुरू न था। हिन्दुओं में निगुरे को बड़ी हीन दृष्टि से देखा जाता था।

बीरबल ने कहा—'जहांपनाह हैं।'

'हम तुम्हारे गुरू के दर्शन करना चाहते हैं।'

बीरबल ने कहा ठीक है, यदि आप यही चाहते हैं तो रात को आठ बजे मेरे बगीचे में पधारिये।

बीरबल घर आया। बड़े विचार में पड गया। क्या किया जाये।

बीरबल को एक भीखमंगा दिखाई दिया। उसे बुला कर कहा तुझे एक रुपया दिया जायेगा। हमारा एक काम करना है। उसने कभी रुपया नहीं देखा था। वह तो बहुत खुश हो गया। उसने हां कर दी।

मुझे कहानी में कहानी कहनी पड़ेगी, वह भिखारी एक रुपये से ही बावला हो गया। क्यों ? इसलिये कि उस ने रुपया देखा ही नहीं था।

एक ब्राह्मण को ब्राह्मणताया निवारण में एक गाय दान में मिली। पीने को दूध मिलने लगा, पर ब्रह्म देव दुबले होने लगे। वे विचारते थे कि यह गाय लेकर मैं गौहत्या का पालक मोल लाया हूँ, मुझे कितनों जन्मों तक नर्क में सड़ना पड़ेगा। एक मास में तो वे हाड़ पिंजरा व शेष रह गये।

एक सेठ जी के पास गया। बोला—सेठ साहब मैं जब से गाय लाया हूँ, ब्रह्म हत्या के पालक के डर के मारे दुबला हो रहा हूँ, क्या करूं इस गाय को ?

सेठ ने कहा यदि परेशान है तो अपनी गोशाला में बांध जा उसे। ब्राह्मण गाय को बांध आया। अब वह एक मास तक इन्तजार करता रहा। देखते हैं सेठ जी कितने दुबले होते हैं। पर सेठ जी तो और लाल हो गये। पूछा—'ब्राह्म ने क्या कारण है आप दुबले नहीं हुये। क्या ब्राह्मण हत्या

का पाप आपको दुबला नहीं कर सका ?

सेठ जी बोले तेरे पास केवल एक ही पाप था। वह तुझसे ही कुश्ती करता था, तू परेशान हो गया। यहां तो बहुत पाप हैं वे सब आपस में मिल कर खेलते हैं। मेरे पास तक तो आते भी नहीं।।

कहने का तात्पर्य यह कि जहां एक ही वस्तु है उसका ताल निराला है वह गरीब एक रुपये पाकर सब कुछ करने को तैयार हो गया। बीरबल ने कहा— 'तुम शाम को छः बजे से एक लोटा लेकर मेरे बगीचे में टहलो। और कोई भी कुछ पूछे, बोलना मत।

बादशाह ने विचार किया यदि अपन बीरबल के साथ ८ बजे उसके गुरू के पास चलेंगे, तो वह शायद अपनी बातों का उत्तर न दे। इसलिए ७ बजे ही जाना ठीक है।

बादशाह ७ बजे ही बगीचे में पहुँच गया। एक दरिद्र व्यक्ति को बगीचे में टहलते देखा। उसे परवाह किसकी थी। एक पंछा पहनने को था। उसकी परसनालिटी ऐसी नहीं थी कि वह कोई महात्मा दिखता। फिर भी बादशाह ने उससे पूछा—'आप आनन्द में हैं ? पर वह नहीं बोला। फिर पूछा—'आपका स्वरूप क्या है ? फिर भी वह नहीं बोला। अकबर झुंझला गया और यह समझ कर कि किस मूर्ख से पाला पड़ा। घर चला गया। उसने सोचा बीरबल जोक कर गया।

बीरबल बादशाह के पास गया और कहा—जहांपनाह पधारिये समय हो गया।

बादशाह ने कहा बीरबल आज कुछ इच्छा नहीं है, फिर

कभी चलेंगे। अच्छा यह तो बताओ किसी मूर्ख से पाला जाये तो क्या करना चाहिए ?'

बीरबल बड़ा चालाक था। वह समझ गया कि मेरे गुरू से पाला पड़ चुका मालूम होता है। उसने कहा–'जहांपनाह यदि किसी मूर्ख से पाला पड़ जाये तो वहां चुप रहना चाहिये। मौन कर लेना चाहिये।

अब क्या था, स्वयं बादशाह पर यह उतर रही थी, वही मूर्ख सिद्ध होता है। मूर्ख से पाला पड़ने पर गुरू ने मौन कर ली।

पर बादशाह चुप होने वाला नहीं था। उसने बीरबल को इसका करारा उत्तर देने का विचार किया।

एक बार किसी सफर पर निकले। रात को चार बजे उठ कर बीरबल को जगाया और कहा—'बीरबल मुझे एक भयानक स्वप्न आया। अपन दोनों किसी दूर जंगल में निकल गये। जंगल में दो बढ़िया हौज थे। पास-पास, एक में शहद भरा था और एक में नर्क संयोग की बात तू नर्क के हौज में गिर पड़ा और मैं शहद के हौज में।

बादशाह उसकी खिल्ली उड़ाना चाहता है।

बीरबल ने कहा—'क्या खुदा की कुदरत है। आपको और मुझको एक सा सपना आया है। पर मुझे इससे जरा आगे तक आया।

बादशाह ने पूछा—'वह क्या था ?

बीरबल ने कहा—'जहांपनाह आपकी और मेरी मुहब्बत कुछ कम नही। मैं आपको चाट रहा था, आप मुझको ?

बादशाद की तर्क समाप्त हो गई।

यह सब बुद्धि का अतिरेक है। आप हंसते हैं, जरा रोने की तरफ भी आइये। वरना रोना तरसेगा विचारा !

शिक्षा का उद्देश्य अमृत तत्व को पाना है। अशुभ से शुभ और शुभ से शुद्ध की ओर आना है।

ज्ञान से वस्तु विज्ञान मिलता है, और शिक्षा से शुद्धाचार मिलता है।

एक बार याज्ञवल्क्य वन को जाने लगे। उनके दो पत्नियां थी। गार्गी और कात्यापिनो ! ऋषि ने कहा मैं जा रहा हूँ, जाने के पूर्व मैं तुम्हारे गोधन आदि का बटवारा किये जाता हूँ, जिससे बाद में विवाद न हो तुम दुश्मन न बन जाओ।

गार्गी क्या कहती है—'जिसे प्राप्त करके अमृत न वन सकूं। उसका क्या करूंगी।'

तब याणवल्क्य ने कहा—'अमृत का लाभ करो।

भनवान महावीर ने भी ज्ञान को वस्तु विज्ञान के लिए तत्व को जानने के लिये आवश्यक समझा आदि। शिक्षा से आचरण को शुद्ध करने का मार्ग बताया।

विद्या का अन्तिम ध्येय है पात्रता।

हितोपदेश में विष्णु गुप्त ने कहा है :—

विद्या ददति विनयं, विनयाद्याति पात्रता

विद्या से विनय और विनय से पात्रता आती है।

आप में पात्रता आवे। दूसरे का जीवन रख कर अपना जीवन रखो। दूसरे का पेट काट कर जीवन मत चलाओ। शिक्षा से कला आती है। उनमें दो कला मुख्य हैं :—

कला बहत्तर जिन कही ।
जिनमें दो सरदार ।
एक जीव की जीविका ।
एक जीव उद्धार ।

शिक्षा के दो ही उद्देश्य होने चाहिये । एक तो संसार में ठीक ढंग से अजीविका चल सके और आत्मा का उद्धार हो सके । ऐसा आत्मविचार देने वाली शिक्षा है । और वह शिक्षा जिससे छात्रों का जीवन बरबाद होता, जिससे छात्र माता-पिता को मूर्ख समझते हैं वह हमारे काम की नहीं ।

हम उन तमाम किताबों की,
काबिले जब्ती समझते हैं ।
जिन्हें पढ़ कर के बच्चे-
बाप को खब्ती समझते हैं ।

मैं तो कहता हूँ-उन स्कूलों और कालिजों को भी बंद कर देना चाहिये-जिनमें ऐसी शिक्षा दी जाती है ।

हमारे यहां तो मातृ देवो भव, पितृ देवो भव । आदि से शिक्षा आरम्भ की जाती थी ।

हमारी शिक्षा में वासना और मौत न हो प्रेम हो । शिक्षा उद्देश्य प्रेम है-एक शायर ने कहा है-

महोब्बत की खुदा तक रिसाई है ।
अगर सच मानो तो मुहब्बत खुदाई है ।।

आप महोब्बत को सीखो, प्रेम को सीखो ; सारा संसार प्रेम के ही आश्रय पर जीवित है । कीडी से कुंजर तक आपके प्रेम के भाजन बनें !

अशुभ से शुभ और शुभ से शुद्ध की ओर आना ही शिक्षा का उद्देश्य है ।

५ : भूदान और धर्म

आज 'भूदान और धर्म' पर मुझे कुछ कहना है। आज से ढाई हजार वर्ष पहले अहिंसा और अपरिग्रह को भगवान महावीर और बुद्ध ने संसार के सामने रखा था। उस समय वैचारिक समस्यायें थीं। पूर्वीय देशों में भगवान महावीर और बुद्ध अहिंसा और अपरिग्रह का प्रचार कर रहे थे। जबकि सुदूर पूर्व चीन और जापान में कन्फार्थमेह कुण, लाओत्सी, ताओ, शिन्तों आदि अहिंसा और अपरिग्रह का प्रचार कर रहे थे।

इस प्रकार ढाई तीन हजार वर्ष पूर्व अहिंसा और अपरिग्रह का प्रकाश फैला चुका था। निरन्तर यह प्रकाश फैलता रहा।

जिस प्रकार रोगाक्रांत विपत्ति ग्रस्त व्यक्ति संकट काल में सुयोग्य चिकित्सक का परामर्श लेता है, उसी प्रकार अनेकांत से भी समय-समय पर परामर्श लिया जाता रहा। आज भी अहिंसा और अपरिग्रह को अनेकांत ही उचित परामर्श देता है। उसका मार्ग दर्शन करता है।

उस समय में भूमि का इतना बड़ा प्रश्न नहीं था। अतएव परिग्रह मूर्च्छाभाव तक ही सीमित था। केवल हृदय

परिवर्तन तक का ही लक्ष्य निश्चित था।

पर, आज जमीन की समस्या आउपस्थित हुई है। जमीन ने विचार, भूख ने दर्शन और रोटी ने संपत्ति को हड़प लिया है। समस्या गम्भीर है।

संसार में सत्ता व संपति का शासन है। कुछ समय पूर्व सुरा और सुन्दरी का शासन था। राजा लोग सुरा और सुन्दरी में उन्मत्त होकर मदहोश हो जाते थे।

सत्ता और सम्पति की होड़ लगी हुई है। ऐसे समय में अहिंसा का कोई प्राणवान अर्थ होना ही चाहिये।

शांति का आधार अहिंसा है। यह आज के विश्व के अधिकांश मानव समाज ने स्वीकार कर लिया है। आज इस विषय पर बोलने का इसलिये भी आवश्यक हुआ कि आज विश्व की उलझन को सुलझाने वाले सन्त पुरुष विनोबा भावे का जन्म दिन है। उस महात्मा ने संसार को पथ प्रदर्शन दिया है।

जमीन और धन, सम्पत्ति और शासन, संग्रह और सत्ता की तरफ जाने से प्रजा में, जन-जन में दीनता गरीबी वीर्यहीनता और बेबसी आ बसी है।

एक अमेरिका की लड़की जो वहां युनिवर्सिटी में मनोविज्ञान का अध्ययन करती थी, उसने विचार किया कि भारत इतना गरीब देश है, फिर भी उसने विश्व में इतनी प्रधानता पाई, इसका क्या कारण है? वह जानना चाहती थी। उसने सोचा संसार के बहुत देश इस संक्रमण काल में आजाद हुआ, फिर भी नैतिक महत्व भारत का है, वैसा दूसरे का नहीं। इसका रहस्य क्या है?

इस रहस्योद्घाटन के लिये वह अमेरिका से चल पड़ी। उसने पर्दनशीन औरतों को देखा और आज की फेशनेबल लड़कियो को भी। पढ़े लिखे बाबुओं को भी देखा और अनपढ़ कृषकों को भी। जन-जन के मन-मन की एक ही चर्चा सुनी 'भूदान' की। जहां जाती जिधर जाती–'भूदान' सुनाई देता। पत्रों में भी भूदान के समाचार मिलते। उस ने सोचा, यह क्या बात है। वह चल पड़ी, उस मुट्ठी भर हड्डी वाले तेजोपुञ्ज के पास। यह जानने के लिये कि क्या रहस्य है इसका? प्रथम दर्शन में ही वह वारा न्यारा हो गई। श्रद्धाविभूत हो गई। वह सन्त विनोबा की भूदान यात्रा की पथिक बन गई। २००० मील की पैदल यात्रा वह महिला कर गई जो मोटर के बिना कदम धरना न सोखी थी। क्या जादू कर दिया था उस सन्त ने।

दो हजार मील की भारतीय पैदल यात्रा में उस अमरिकन लड़की ने जो मनोविज्ञान की पण्डित थी, सर्वत्र जन-जन के मन-मन में हृदय पाया। प्रेम मये मानवों को देख कर वह आनंद विभोर हो गई और उसने भारत को फतवा दे ही तो दिया–

हिन्दुस्तान गरीब है पर दीन नहीं। यही उसके गौरव का कारण है।

उसने भारत में दर्शन किये त्याग की महिमा के। उस ने भोग पर त्याग की विजय अपनी आँखों से देखी। उसने देखा भारत का वह राष्ट्रपति, उस भारत का जितना बड़ा आज तक वह कभी नहीं रहा था, अपने वैभव को भूल कर नतमस्तक होकर सन्त विनोबा की घास फूस की कुटिया

में परामर्श के लिये चला आ रहा है।

उसने देखा त्यागी के चरणों में वैभव लौट रहा है। बड़े-बड़े धन-पति उद्योगपति, राजे महाराजे वाह्य रूप से अकिंचत पर आत्मा के धनी को अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को तत्पर हैं। वह कोकिल भारत महिमा को मुग्ध कण्ठ से गाने लगी-

भारत! तेरा गौरव सचमुच यही तो है। तू आज त्यागी के कारण ही संसार का सिरमौर है।

प्रश्न उठता है-ऐसा भारत में क्यों होता है? इसका कारण है भारतीय संस्कृति। हमारी परम्परा ही त्याग की रही है। हमने त्याग को सदा महत्त्व दिया है, परन्तु त्याग भी अहिंसा से अनुप्रागित होना चाहिये।

हिंसापूर्ण त्याग और भी बड़ा हो सकता है, वह अपनी जान पर खेलना है, पर भारत ने उस त्याग को कभी महत्त्व नहीं दिया। एक शिकारी या डाकू; क्या कम त्याग करता है। वह अपना सिर हथेली पर लेकर फिरता है। पर, भारत ने उसे कभी सम्मान नहीं दिया।

लोगावली के एक न्यायाधीश (जज) शेर की शिकार के बड़े शौकीन होते थे। उन्होंने मुझे शेर की शिकार के संस्मरण बताये। उन्होंने कहा–

'एक दिन मुझे, दिनकर भाई ने कहा–पास के जंगल में एक शेरनी आई है। वह सात फिट ऊंची। बड़ी खूंख्वार व मर्दानी है, यदि आप उसे मार दें तो आपका नाम हो जाएगा!

मैं उसकी तलाश में निकल पड़ा। मैंने जहां मोर्चा

लगाया था वहां एक भयानक खड्डा था। उस खड्डे के किनारे एक वृक्ष था। उसी पर मैं बैठ कर शेरनी के आने की प्रतीक्षा करने लगा। बैट्री लगा रखी थी और बन्दूक भी तान ली थी। ३ बजे रात को शेरनी आई, उसकी आंखें बिजली के बल्ब की तरह अन्धकार में चमक रही थीं। मैंने सोचा, गोली छोड़ी तो हमला करेगी।

कुत्तें और शेर में यही अन्तर है कि कुत्ता लाठी पड़ने पर लाठी को काटता है, जबकि शेर लाठी वाले पर हमला करता है।

मैंने सोचा यदि उसने एक ही झपट्टा दिया तो काम तमाम हो जायेगा।

गोली चलाने की हिम्मत न हुई। जान बचा कर घर आया।

१०-१० दिन तक बैठे रहना पड़ता है। यह मालूम नहीं जान बचेगी या नहीं।

इस तप का लाभ क्या? तमाम हिंसापूर्ण वासना भोग और नामवरी के आधीन त्याग का कोई महत्त्व नहीं।

अहिंसा के आधार से जो त्याग किया जाता है, उसमें आत्मा की आवाज होती है।

बिनोबा का भूदान से सम्बन्ध है और हमारा धर्म से। प्रश्न उठेगा, हमारा क्या सम्बन्ध है? हमने तो जमीन-जायदाद सब कुछ छोड़ दी हैं। आखिर क्यों? हमने त्याग किया उसका सम्बन्ध भूदान से है। भूदान का सम्बन्ध धर्म से है। और धर्म का सम्बन्ध हम से है।

अहिंसा का विकास है वहां हमें सहयोग देना ही है।

जरूरत से ज्यादा रखना हिंसा है।

दो चार बातें आपके घर की भी कह दूं। आपको वस्त्र कितना चाहिये? आपके मन की तृष्णा तो अधिक है।

एक पंजाबी कवि ने कहा है कि–

'आशा कभी पूरी नहीं होती। एक दिन आशा वाला पूरा हो जाता है।

एक दिन जमीन ने कहा–इन्सान पागल है। मुझे उसने कानून के बन्धन में बांधना चाहा। उसने अपने नाम मुझे रजिस्टर्ड कराया। पर मैं पूछती हूँ–वे रजिस्टर्ड कराने वाले कहां हैं? उनके रजिस्टर्ड कराने के कागज भी विलीन हो गये। उसकी मिट्टी को मिट्टी में मिलना पड़ा। उन मान्धाताओं के साथ मैं नहीं गई। क्या अब भी इन्सान पागल नहीं। जो मुझे अपनी समझता है।

लोग कहते हैं, पैसे को पैसा खींचता है। १ लाख १० लाख या एक करोड़ हो गया। फिर भी जीने के लिये तो कुछ दूसरी ही वस्तु चाहिये। आज तक नहीं सुना कि किसी ने सोना खा कर पेट भरा हो, न यह किसी अखबार में छपा कि किसी ने नोट से प्यास बुझा ली।

सबको अन्न, जल, वस्त्र और जीवन निर्वाह की सामग्री चाहिये। तुम्हें जीना है, बेशक जीवो। तुम्हारी ही तरह दूसरों को भी जीने का अधिकार है। जीवन की आवश्यक सामग्री भोजन आदि पर तुमने कब्जा कर लिया है।

हवा का झगड़ा नहीं। पानी का झगड़ा नहीं। जमीन का झगड़ा नही। पर, जब लोग ज्यादा इकट्ठे हो जाते हैं।

वे लाखों, करोड़ों की तादाद मे मिल जाते हैं। तब उनके स्वार्थ टकराते हैं, झगड़े आरम्भ हो जाते हैं। भूमि पर, पानी पर और हवा पर भी कब्जा हो जाता है। जोरा उसका मोरा' के अनुसार सत्ता का शासन होकर तबाही का श्री गणेश हो जाता है।

जो लोग जंगलों में रहते हैं, शुद्ध वायु मण्डल में सांस लेते हैं, परमात्मा का भजन करते हैं। उनके स्वार्थ टकराने का प्रश्न उपस्थित नहीं होता। आनन्द से जीवन व्यतीत करते हैं। पर यह जीवन सदैव सम्भव नहीं। आज जन-संख्या की वृद्धि के कारण वह जीवन पुनः निकट भविष्य में बन नहीं सकता। बुद्धिमानी इसी में है कि हम इस विपन्यावस्था में भी मार्ग ढूंढ निकालें। इसका एक मात्र मार्ग है, जरूरत से ज्यादा का त्याग। इसके लिये विनोबा जी का भूदान, संपत्ति दान और जीवन दान समय की सूझ है।

आपको देश के उत्पादन के अनुसार अपने हक का कपड़ा, देश की राष्ट्रीय आय के अनुसार उचित व्यय करने का अधिकार है। मान लो कि आप ३० गज कपड़ा और आठ आने रोज खर्च करने के अधिकारी हैं, यदि आप इससे अधिक वस्त्र बना कर पेटियां भरते हैं या १०-२० रुपये रोज उठाते हैं, तो आप देश द्रोही हैं। इस देश द्रोह के कारण आप कितनी ही माओं की लज्जा ढंकने की समस्या बढ़ा देंगे, और कितने ही भूखों के मुंह की रोटी छीन लेंगे।

घर बैठकर अहिंसा का विचार करने वालों! जरा बाहर आओ! तुम्हारी अहिंसा का रचनात्मक रूप समाज

के सामने रखो। पूंजी संचय का नाहक दम्भ न भरो। एक दिन यदि तुम खुशी से अपने संग्रह को वितरित न करोगे, और यह यश और पुण्य न कमाओगे तो अहिंसा के बाद हिंसा का मार्ग तुम्हारे दम्भ को चूर-चूर करके मृत पशु को गीद्ध की तरह नोंच खायेंगे।

वे लोग अपराधी हैं जो अन्न, धन या भूमि पर कब्जा करके बैठे हैं।

संग्रह से पाप नहीं होगा। व्यापार से संग्रह तो हो ही जाता है। पर उसका उचित वितरण भी आवश्यक है।

एक तरफ लाखों एकड़ जमीन हो दूसरे के पास जमीन के अभाव में तड़प-तड़प कर मर जाय, यह मानवता का अभिशाप है।

हमें एक भाई ने कहा—महात्मा ! हमें एक बैल मिल जाय तो खेती हो जाय।

महाराज के पास बैल तो ठीक बछिया भी नहीं। लोग बैल कसाईखाने को बेच देते हैं। उपयोगिता वादी लोग कहते हैं। पशु ज्यादा हो जायेंगे तो वे सब घास खा जायेंगे। और उपयोगी पशु भूखों मरेंगे। इसलिये अनुपयोगी पशुओं को स्लाटर हाउस में भेज दिया जाय।

तरस आती है उनकी बुद्धि पर। गोया वे ही घास उत्पन्न करते हैं। लाखों पशु रोज काटे जाते हैं।

बम्बई में मास्टर हरदेव सहाय जैन ने हमारे साथ काम किया। पण्डित जी तक खबर पहुँच गई। १५ लाख का गोमांस अकेले बम्बई से जाता था। कहिये कितनी गायें कटती होंगी। हमने एक दिन की हत्या बन्द कराई। अकेले

बम्बई में ४ हजार पशु रोज कटते हैं। मद्रास, कलकत्ता आदि स्थानों की संख्या अलग है। सारे देश के पशु-हत्या के आंकड़े इकट्ठे करके कल्पना करने पर तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

मैं गोहत्या का ही नहीं प्राणी मात्र की हिंसा का विरोधी हूं। गाय के सहारे आपका परिवार जी सकता है। गो चलती फिरती दुकान है।

यदि १ करोड़ की फैक्ट्री लगायी गयी तो उसके द्वारा लाभ ८-१० साल के बाद हो या न भी हो। बशर्ते कि हड़ताल न हो, आग न लगे।

तब तक आप न नोट खा सकते, न सोना चबा सकते। और यदि करंसी फेल हो गई तो लेने के देने पड़ जायेंगे। करंसी जब चाहे आपको स्वर्ण-मुक्त कर सकती है। ये तांबे पीतल के टुकड़ों से बने सिक्के और जस्ते के टुकड़ों से बने रुपये तुम्हें बावले बना रहे हैं। इनके लिए तुम दूसरे के खून को क्यों लूटते हो।

आप मील से लाभ की आशा लगाये बैठे रहिये १० साल।

अब जरा इससे बड़ा मील देखिए। आपने २०-२५ गायें रखीं। रात की गायें लाइए। सूखी घास डाल दीजिये। प्रातः काल अमृत के घड़े भर लीजिये। गावों के लोग दूध-घी बेच दें, पर छाछ जिसके लिये देवता भी तरसते हैं। कहा जाता है :–

तक्रं शक्रस्य दुर्लभम्।

आजादी मिलते ही पाकिस्तान में ४ करोड़ पशु काट दिये गये। अकेले लाहौर में छः हजार गायें रोज कटने

लगी। परिणामस्वरुप छः मास बाद ही पाकिस्तान सरकार को कानूनन गौहत्या बन्द करनी पड़ी।

सूखा घास खाकर भी जो पशु अमृत तुल्य दूध प्रदान कराता है, उसकी हत्या करके तुम क्या लोगे ?

तुम्हारी दृष्टि आर्थिक हो गई है। इस बात में अर्थ प्रधान कर रहे हो। यह ठीक नहीं ! ऐसे तो एक दिन यूज लेस मनुष्यों की भी तुम यह हाल करोगे।

आज भूदान और धर्म का प्रश्न है। विनोबा ने कहा तुम्हारे चार लड़के हैं, तो पांचवा मुझे मान लो और अपनी भूमि का पांचवा हिस्सा मुझे दे दो। कोई बेजमीन न रहे। उनका उद्देश्य है सन् ५७ तक पांच करोड़ एकड़ जमीन एक करोड़ परिवार में बांट कर देश को समृद्ध बना दिया जाये। गरीबी और अमीरी को बांट दिया जाये। कोई बे-जमीन होकर जीने के अधिकार से वंचित न हो जाये। भूदान जीने का अधिकार देता है। यह शुभ दिन बातों से नहीं, रचनात्मक काम से आने वाला है। अपने हाथ से अपनी वस्तु बांट दो, इसी में भलाई है।

दिल बदलने की आवश्यकता है। आप अपनी जायदाद में पुत्र को उत्तराधिकारी मानते हो। मुसलमान लड़के और लड़की को समानाधिकारी मानते हैं। जबकि ब्रह्मा में पुत्री को उत्तराधिकारी माना जाता है। यह सब दिल बदलने की ही तो बात है। यदि आप दूसरों के लड़कों को भी अपनी सन्तान मानने लग जाओ, तुम जगन्मान्य और नगा-त्यिता बन जाओ तो इसमें दिल बदलने के सिवाय और क्या जरूरत होगी।

विनोबा तीन वर्ष पूर्व काम्युनिस्टों द्वारा विध्वंस तेलं-

गानों की स्थिति देखने गये। प्रार्थना सभा में दो हरिजनों ने कहा—'यदि हमें पांच एकड़ जमीन ही मिल जाये तो हम हमारा गुजर कर खायें, भूखों मर रहे हैं।

उस दिन १८ अप्रैल को सर्वप्रथम पोचनपल्ली ग्राम (हैदराबाद) में विनोबा ने भूमि की मांग की। केवल पांच एकड़ जमीन की। उस समय रामचन्द्र रेड्डी ने सौ एकड़ जमीन देकर 'भूदान' का श्रीगणेश किया। उन्होंने इसे एक इशारा समझा और भूदान की गंगात्री का उदय हुआ। यहां से भूदान गंगा बह चली।

गरीबों को जमीन मिलने लगी।
कवि दिनकर का वह घण बदलने लगा जो—

रवानों को मिलता दूध भात,
भूखे बालक अकुलाते हैं।
मां की हड्डी से चिपक जहां,
जाड़ों की रात बिताते हैं।
युवती की लज्जा वसन बेच,
जब ब्याज चुकाये जाते हैं।
मालिक तब तले फुलेलों में,
पानी द्रव्य बहाते हैं।

वस्तुतः ये पक्तियां विनोबा के भूदान ने बदल दी सन् ५४ में हजारों मानवों में अपना जीवनदान देकर इस आन्दोलन में जान फूंक दी। विनोबा के शंखनाद में शंख ध्वनि मिट। देने वालों में बाबू जयप्रकाश नारायण भी है, जिन्होंने भूदान के लिए अपना जीवन दान दे दिया।

जो भूमि प्रेम द्वारा प्राप्त होती है, वह कानून द्वारा प्राप्त होने वाली भूमि से लाखों गुणा अच्छी है।

दान देना धर्म है। वह पुण्य का काम है। जो आत्मा को पवित्र करे उसे पुण्य कहते हैं। आप भूखे को भोजन देते हो। प्यासे को पानी पिलाते हैं। नंगे को वस्त्र देते हो। इसके पीछे एक भावना है। वही पुण्य है। धर्म के विश्वास के कारण वह आसान हो जाता है, जबकि कानून के शिकंजे से अविश्वास की भावना बढ़ती है, और प्रजा खिलाफत करने को तैयार हो जाती है।

मनुष्य का हृदय परिवर्तित अहिंसा से होता है। कानून से नहीं।

महावीर का शासन श्रद्धा का शासन है। मन में श्रद्धा होने पर कठिन से कठिन कार्य करने में भी हिचकिचाहट न होगी।

कड़ाके की सर्दी पड़ती हो, फिर भी शिप्रा के ठन्डे जल में स्नान करके हर सिद्धि के दर्शन को बहनें क्यों जाती हैं। क्या उनसे यह काम कानून करा सकता है। नहीं! उसके पीछे एक श्रद्धा काम कर रही है। श्रद्धा के सामने कानून बेकार साबित होता है। कानून के पीछे भय का ताण्डव है जबकि श्रद्धा के पीछे आत्मा का आनन्द!

दो व्यक्ति संघर्ष को मिटाने के लिये वकीलों के पास जाते हैं। पर, क्या वे संघर्ष को मिटा देते हैं? क्या उनके पास कोई ऐसा कानून है जो हृदय से उठने वाले संघर्ष को मिटा दे। दोनों के स्वार्थ टकराते हैं। उसे मिटाने का एक मात्र उपाय है, हृदय परिवर्तन! उसे कानून नहीं, विशुद्ध श्रद्धा ही मिटा सकती है।

विनोबा ने हृदय परिवर्तन की बात सोची।

पहले हमारे यहां वितरण का अच्छा तरीका था। बड

और पीपल ब्राह्मणों के लिये छोड़ दिये थे। कपिला गाय ब्राह्मण को दी जाती थीं ताकि वह चिन्ता मुक्त होकर देश सेवा कर सके।

जमीन का एक हिस्सा हरिजनों को मिलता था। दो भाग वैश्य को व एक भाग राजा को मिल जाता था। वैश्य वितरण करते थे। वितरण न करने पर कब्जी हो जाती है। कब्जी का अर्थ है संग्रहवृत्ति ! कब्जी पेट में भी होती है और बाहर भी। मैं बम्बई से कब्जी लाया हूँ। कब्जी लाया हूँ। कब्जी से शरीर शिथिल हो जाता है। इसी प्रकार धन धान्य की कब्जी भी देश को बरबाद कर देती है।

एक बात और कहूँ—'मैंने देखा। एक मिट्टी का ढेर है और जब आगे बढ़ा तो उतना ही नीचा एक खड्डा देखा।

उस खड्डे को पाटने के लिये वह मिट्टी उसमें डालनी होगी। मानवता का अभिशाप है, हमारी समाज की विषमता इसे मिटाना होगा।

आप अपनी सम्पत्ति का, अपनी जमीन का और अपने जोवन का सदुपयोग करो। यदि आप अहिंसा द्वारा इस पवित्र कार्य में प्रवृत्त होंगे तो हिंसा रुकेगी। परिग्रह का त्याग सदुपयोग में करो।

भूदान अहिंसा और अपरिग्रह का पवित्र प्रतीक है। आप हृदय परिवर्तन करो। हृदय में स्वार्थ की जगह परमार्थ और प्रेम को स्थान दो।

आपका यह हृदय विश्वशान्ति का कारण होगा। और आप इस जन्म में और पर जन्म में सुख और शान्ति का अनुभव करोगे।

६ : आजादी

भाईयों और बहनों !

आप स्वाधीनता, स्वतन्त्रता या आजादी चाहते हैं। सचमुच यदि आप आजादी चाहते हैं तो आपको बन्धन छोड़ने होंगें। एक दिन नंगा होता है। ये मकान, ये धन, ये आभूषण, ये परिवार, ये सब आपके बन्धन हैं।

आज नग्नता भी बन्धन हो गयी है। शरीर का नग्न होना आवश्यक है जबकि सत्य नग्न हो जाये।

प्रातःकाल साधु तीन मनोरथ का चिन्तवन करता है। उसके प्रथम मनोरथ में वह चिन्तवन करता है कि–

वह दिन धन्य होगा जिस दिन मैं अचेलक होकर संसार में विचरूंगा।

तुम्हारी आँखों पर बन्धन बंधे हुये हैं। यदि तुम आजादी चाहते हो तो बन्धनलीन हो जाओ।

'अजादी' क्या है ? खलील जिब्राहन ने एक पुस्तक लिखी है। उसमें उसने लिखा है। उसमें उसने लिखा कि–

आजादी और गुलामी दो बहने थीं। दोनों में परम मित्रता थी। एक बार दोनों ने क्षिप्रास्नान का विचार किया।

लोग समझते हैं। गंगा स्नान से पाप धुल जाते हैं। पर वे लाग समता की गंगा में स्नान नहीं करते जिसका पुनीत कभी अपवित्र नहीं बनता।

दोनों स्नान करने गयीं। कपड़े बाहर रख कर पानी

में धंस गयीं। आजादी स्नान करने में तल्लीन हो गयी। पर गुलामी ? गुलामी को स्नान से क्या मतलब था—बड़ी शीघ्रता से बाहर आई और श्वेत स्वच्छ आजादी के वस्त्र पहन कर शहर में चली गई।

स्नानोतर आजादी बाहर आई। वह अपने वस्त्र न पाकर बड़ी व्यथित हुई। स्त्री जाति का नग्न रहना उसके लिए कठिन था। उसने वे चीथड़े लपेटे और वन में चल दी।

लोगों ने गुलामी को आजादी समझ लिया। स्वच्छन्द रहना—आजाद भटकना, मन में आया खाना—नशा करना और मनमानी करने को लोगों ने आजादी समझ रखी है। क्या हम आजाद हैं।

हम पूछते हैं। भाई तुम कल क्यों नहीं आये ?

तो उत्तर मिलता है, महाराज मैं आजादान, तबियत का हूँ। चार यार मिल गये। चाय पानी को बैठ गये। फिर ताश की बाजी लग गई। दिल में आया क्लब चले गये। रात को सिनेमा चला गया। मन में आया है करता हूँ।

लो, भाई हो गयी आजादी। यह आजादी नहीं स्वच्छन्दता है। आप लोग आजादी और स्च्छन्दता को एक समझते हैं।

मान लो अमेरिका में रेडियो हो, मोटर हो, बंगला हो, आजादी समझी जाती है। शानदार कोठी और कार नहीं तो बरबादी है। परिणाम यह होता है कि किसी कचहरी के सामने से क्यू लगता है—और जब मोटरें खड़ी हो—क्योंकि अमेरिका में हर पांच आदमी के पीछे २ मोटर

होती हैं। तीन-तीन मील का क्यू लगता है। आफिस तक तीन मील तो पैदल चलना ही पड़ता है।

मकानों की हवा में बन्द कैदी को–अपने आपको–तुम आजाद समझते हो।

मुझे एक ८० वर्ष की बुढ़िया मिली। वह अपने आप को मंदसौर की बताती है। टाट का कपड़ा बांध रखा था। पैसे मांग रही थी। कह रही थी अन्नदाता कुछ दो। हमने कहा–माँजी मैं अन्न खाता हूँ–देता नहीं। मैंने पूछा–तुमको क्या मुसीबत है जो भीख मांगती हो। जो भीख मांग रही हो।

उसने कहा–मेरा मकान गिर गया। और रोने लगी।

मैंने कहा–यदि तुम्हारा मकान गिर गया–तो तुम आजाद हो गयीं। आनन्द करो।

मैं तो तुम्हारे मकानों में रहना नरक में रहने के समान समझता हूँ। समझ में नहीं आता–तुम्हारे पास क्या जादू है, कि हम पूंजी के वश में नाग की तरह तुम्हारे जाल में फंस जाते हैं, हम इन नरकों में रहना पसंद नहीं करते।

जंगल की हवा। वहां की शान्ति, यदि तुम अनुभव करो तो समझो।

कई मकान तो इतने गंदे है कि खड़ा होना मुश्किल है। जंगल में रह कर फल फूल खाकर मस्ती में रहने में जो आनन्द है, वह कल्पना शहर में रहने वाले जरा मुश्किल से कर पायेंगे।

हम बम्बई में रहते थे, उन औरतों के पीले-पीले चेहरे-खून का नामो-निशान नहीं। पिलकाये मुंह की

पुतलियां। खून नहीं, स्वास्थ्य नहीं, सौन्दर्य नहीं। उनके पेट में गड़बड़। हृदय में धड़कन। लड़खड़ाता हुआ जीवन, संस्कृति का आभाव। जीवन क्या है--भार है। ऊपर से भार लेबर का। अच्छे-अच्छे कपड़े पहन कर अपनी दरिद्रता को छिपाने का प्रयत्न किया जाता है। मैं बम्बई दो वर्ष रहा। परिणाक स्वरूप पेट का रोग लेकर आया।

खलील जिब्राहन ने लिखा है। यदि मेरा वश चलता तो तुम्हारे ये सब के सब महल और मकान इकट्ठे करके भस्म कर देता और फूंक कर सारे विश्व में उड़ा देता। तुम पहाड़ों की गुफाओं और वृक्षों के नीचे अपनी झोपड़ियों में मस्त रहते और इन महलों की जगह खेतों में आनन्द करते। आज हम आजादी की बात कर रहे हैं।

आज के दिन आजादी आयी है। आप लोग फूले नहीं समायेंगे। भोजन में विशेषता होगी। कपड़े विशेष ढंग के पहने जायेंगे। आप लोग रंगरलिया मनायेंगे। पर वस्तुतः आजादी नहीं आजादी के भेष में गुलामी आई है। आजादी तो जंगल में चली गई है। वह उस बीहड़ जंगल में पहुँच गयी है। जहां साधारण मानव का जाना भी कठिन है।

एक कवि उस वन में पहुँचता है। वह उस जन शून्य वन में एक महिला को देखता है। हड्डियों का ढांचा अवशेष है। पहले तो उसने वह कोई भूत प्रेत समझा, पर, अन्त में पास जाकर पूछा--

तुम कौन हो ?

आजादी--जो भूत प्रेत बन चुकी थी। बोली--आजादी।

फिर

तुम्हारे बच्चे कहां हैं ? तुम मां मालूम होती हो।

आजादी रो पड़ी। और रोते हुए उसने कहा–

माई फर्स्ट सन इस भूसी फाइड । मेरा प्रथम बच्चा सूली पर चढ़ा दिया गया।

और देसरे बच्चे को पागल बना कर जेल भेज दिया।

उस आजादी ने कहना जारी रखते हुए कहा–और तीसरा अभी पैदा ही नहीं हुआ।

दुनिया के इतिहास से यही परिणाम निकाला गया है। आजादी के दीवाने को या तो शूली पर चढ़ा दिया जाता है। या उसे पागल करार देकर जेल भेज दिया जाता है।

भगवान के साथ क्या कुछ नहीं हुआ। उन्होंने मौन ले रखा था। मृत्यु होने का उनका संकल्प था। वे पीटे गये, सांप ने उन्हें डस लिया, कानों में कीलें गाड़ी गयीं।

अनलहक की आवाज करने वाला मंशूर मारा गया। महात्मा ईसा को शूली पर चढ़ना पड़ा । महात्मा गांधी गोली के शिकार हुए।

आजादी चलने वालो, गुलामी को समझो। गुलामी अनेक प्रकार की–आदमी पैसे का गुलाम। स्त्री पुरूष की गुलाम। यदि यों कहुँ कि मतुष्य वासना का गुलाम। और इन सब में सबसे बड़ी–पैसे की गुलामी।

अमेरिका के किसी वार्सिकोत्सव के अवसर पर महात्मा गांधी से अमेरिका वालों ने संदेश मगाया। लोगों को संदेश भेजते समय उन्होंने लिखा कि तुम्हारी गर्वमेंट यदि सिंहासन पर डालर के बदले परमात्मा को बिठा दे तो–

आज सारे संसार की स्थिति। कुछ दूसरी ही हो जाये।

तुम चेतन हो–इस बात का तुम्हें अभिमान नहीं। हां तुम्हें यह अभिमान है कि तुम धनवान हो। मुख्यता तुमने भोग को दी है।

तुम भाग जाओगे यदि कोई तुमसे यहाँ पैसे की मांग करे। आज तुम वस्तु पर नहीं–पर वस्तु तुम पर शासन कर रही है।

दुनिया की सबसे बड़ी पुस्तक और साइज में सबसे छोटी। केवल एक पृष्ट में लिखी हुई, जिसे सारा संसार बगल में दबाये फिर रहा है। और जिसमें केवल दो अक्षर लिखे हुये हैं–जानते हैं आप वह पुस्तक क्या है ? क्या है ?

वह पुस्तक है–पैसा।

सबके सब पैसा चाहते हैं। सारी दुनिया पैसा चाहती है। तुम पैसा चाहते हो। यह मकान पैसा चाहता है। राजा से रंक अमीर से गरीब सब पैसा चाहते हैं।

पर, तुम्हारी आत्मा का शहंशाह प्रकट होगा–वह जब पैसे को ठुकरायेगा, तब तुम आजाद होगे। पैसे से मुक्ति सबसे बड़ा आजादी है।

तुम आजाद हुये-पर डालर पोण्ड पावने से आजाद नहीं हुये।

इच्छा वासना या आदत की गुलामी से मुक्त होना कठिन है। बुराई को अच्छाई के भेष में बताना गुलामी की निशानी है।

एक भिखमंगे ने हमें नमस्कार किया। और कहा कुछ दीजिये। हमने कहा-भई हम तो फकीर हैं। पर यह तो

बता तू रोज नाक रगड़ता है–क्या मिल जाता है तुझे।

उसने कहा–रोटी तो मांग कर खा लेता हूं। पैसे मिलते हैं। उससे चाय पीता हूँ।

हमने पूछा कितनी ?

वह बोला–मुक्ति (बहम)

और क्या करना है। हमने पूछा–

सिगरेट पीता हूँ। मिठायी भी खा लेता हूं। और वह भी मुक्ति।

हमें आश्चर्य हुआ। सिर टेकता है। स्वाभिमान को बेचता है। और गौरवहीन हो जाता है। अहंकार से हीनता और भी भयंकर है। अहंकार से कदाचित कुछ लाभ भी हो जाये–पर हीनता से कोई लाभ नहीं। वह आत्माशक्ति का नाश करता है।

पान सिगरेट और मिठाई खाकर भी भीख मांगता है। आजादी क्या है। तुम नहीं जानते। तुम पैसे के गुलाम हो।

मन बड़ा खराब है। उसके तुम गुलाम हो। उससे आजाद होना बड़ा कठिन है।

एक जमाना था मनुष्य ने चाहा–मुझे ऐसा घोड़ा मिल जाये जिस पर बैठ कर दुनिया में घूम सकूं। तो आजाद हो जाऊं।

घोड़ा मिल गया। जीन कसा पावड़े में पांव दिये। लगाम पकड़ी। पर सवार अनगड़ था–गिर गया घोड़े से। पांव पांवड़े में रह गये। क्या दशा हुई उसकी जानते हैं आप। वह घोड़े पर सवार न रह सका। घोड़े के पीछे-

पीछे घसिटता रहा वह।

आप ऐसे ही सवार हैं आपको ऐसा घोड़ा मिला, मिल जाये जो सारे विश्व का क्षण में चक्कर लगा देता है–वह है मन। पर आप मन पर सवार नहीं। वह आपके वश में नहीं। वह आगे चला जाता है–आप उसके पीछे घसीटाते–पिटाते चलते हैं।

आज १५ अगस्त है। देश गुलामी से मुक्त हुआ। हम घर से मुक्त होकर फकीर बन गये। हम बन्धनों से छुटने को आजादी कहते हैं। अपना-अपना प्लेट फार्म है। एक की गुलामी को छोड़ कर दूसरी गुलामी स्वीकार करने को आप आजादी कहते हैं। पर हम वासना की गुलामी से छुटने का नाम आजादी रखते हैं। यदि तुममें अध्यात्मिक स्वतन्त्रता आयी है तो हम समझेंगे तुमने सच्ची आजादी को समझा है।

भगवान ने सुमगडांग सूत्र के आरम्भ में ही फरमाया है कि बधन्न को जान कर उनको तोड़ दो।

रागद्वेष, मन की इच्छा कामक्रोध, मद, मोह, माया आदि सब बन्धन हैं। इन्हें तोड़ कर परम श्रद्धा, शांति, ज्ञान, दर्शन आदि चारित्र रूप पाथेद को प्राप्त करो। सच्ची आजादी के लिए मौत को हिलाञ्जली देकर प्रेमामृत का पान करो।

आत्मा का अमृत ही आत्मा की आजादी है।

आजादी में सत्-चित् और आन्नद का अनुभव होता है। अर्थात वह स्वयं सच्चिदान्नद बन जाता है।

७ : सुमति और कुमति

हमारे इस लोक में चेतन एक पुरुष है। यह पुरुष असंख्य आत्म प्रदेशों का पुञ्ज है, जो अनन्त पुद्गल पिण्डों से आवृत है। आत्मा और परमात्मा का ज्ञान चेतन अवस्था में होता है अचेतन में नहीं।

चेतन जिसे हम ज्ञान और उपयोग करते हैं। उपयोग और वीर्य से युक्त आत्मा को पुरुष करते हैं। उसकी दो पत्नियां हैं। एक सुमति दूसरी कुमति।

आत्मा को स्वतन्त्रता, आजादी दिलाने का काम सुमति का है। और बन्धन पराधीनता देने वाली कुमति है।

जब आत्मा सुमति की आज्ञा में रहती है तो वह स्वभाव दृश्य में पहुँच जाता है और कुमति के चक्कर में आता है, तो वह विभाव दशा में पहुँच जाता है।

आपका झुकाव किधर है ? यह देखना है।

सुमति का जनक विवेक है और कुमति का जनक अविवेक।

सारे संसार के धर्मोपदेशकों का उद्देश्य मुक्ति है। मुक्ति कितनी दूर है? इसका उत्तर एक पंजाबी कविता में बड़ा ही सुन्दर ढंग से दिया गया है :-

मोक्ष अर्हन्ता वाली,
कितनीक दूर है।
सुमति तो नेडे-नेडे,
कुमति तो दूर है।

मुक्ति सुमति के एकदम निकट है। और कुमति से दूर है।

दो पद में प्रश्न और उत्तर दोनों हैं।

अष्ट तत्त्वों के बाद मोक्ष का विवेचन आता है। अष्ट तत्त्वों का विवेचन भी मोक्ष के लिए ही तो है। सारे के सारे दर्शन, सम्पूर्ण विज्ञान और वाड्मय का उपदेश एक मात्र मोक्ष के लिए ही तो है। इन ऋषि महार्षियों ने जो तप और त्याग किया, तीर्थंकरों ने तीर्थ की स्थापना की, आखिर इन सबका क्या उद्देश्य ? यही मोक्ष !

पर मोक्ष का सरल मार्ग है सुमति और मोक्ष की बाधक है कुमति ! मोक्ष चाहो तो कुमति छोड़ो।

एक सेठ ने अपना विवाह किया। पर १२ साल बीतने पर भी कोई सन्तान नहीं हुई। उसकी गृहलक्ष्मी बड़ी सुशील थी, पति की सेवा में अपना सर्वस्व न्योछावर किये हुए थी। सेठ जी भी बहुत खुश थे। घर में आनन्द के फौवारे छूटते थे। पर वे एक कुल दीपक चाहते थे। दीपक के बिना घर में अन्धेरा लगता है।

घर का दीपक कभी-कभी कुल-कलंक निकल जाता है। पर लोग उसे घर का दीपक ही कहते हैं। पर वह वस्तुतः घर का अन्धेरा है ! माँ कहती है–बेटा ! मैंने तुझे ८ मास पेट में रखा। पाला पोसा और बड़ा किया ! तो वह कुला-

गार उत्तर देता है—

तो तैने क्या अहसान किया ? तुझे कष्ट न हो इस लिये हाथ पांव सिकोड़े पड़ा रहा। कहीं हाथ पांव फैला देता तो तेरा पेट फट जाता। और तू आज जिन्दा भी न रहती। रहा मुझे पेट में रखने का सवाल सो तू उस तंग कोठरी का १-२ रुपये महावार किराया ले ले।

यह है हाल कुल दीपक का, फिर भी लोगों की चाह है। कौन रोक सकता है उस चाह को।

सेठ जी की धर्म पत्नी ने कहा–यदि मेरी किस्मत में सन्तान नहीं है तो कृपा करके आप दूसरा विवाह कर लें। शायद उसके भाग्य से मैं अपने लाल के लालन-पालन का सौभाग्य प्राप्त कर सकू ं।

सेठ जी ने बहुत मना किया पर पुत्र प्राप्ति की तृष्णा और पतिपरायण पत्नी के आग्रह को सेठ नहीं टाल सका। विवाह कर लिया। छोटी बहू घर में आ गई। दोनों मिल कर रहने लगीं।

पर यह व्यवहार अधिक दिन न चल सका। विधि का विधान कुछ दूसरा ही था। सौतिया डाह जाग्रत हुआ। सेठ पर मोह जाल फैलाया गया। नई नवेली और छबीली में आकर्षण कुछ ज्यादा था। धीरे-धीरे सेठका मन बड़ी पत्नी हट कर छोटी में लीन हो गया।

बड़ी बहुत आत्मसन्तोषी थी। उसे अपने उद्देश्य की पूर्ति करनी थी। वह शान्ति से प्रतीक्षा करने लगी। सेठ का मन इतना विरक्त हुआ, उस बड़ी से कि अब वह उसे देखना भी नहीं चाहता था।

बहुत दिन हो गये। बड़ी ने सोचा—क्यों न पति देव को एक दिन अपने यहां भोजन कराया जाय। अपमान को सिर पर लाद कर भी वह छोटी के भवन में गई। और सेठ से प्रार्थना की कि—नाथ! एक दिन इस दासी को भी पवित्र करिये। कल आप मेरे यहां भोजन करिये।

सेठ—तुझ गंवारन को आता ही क्या है। खाना बनाने की शहूर नहीं, बात चीत का ढंग नहीं, तीन कौडी की अकल नहीं। क्या करें तेरे यहां आकर!

बडी को बड़ी निराशा हुई। उसने छोटी से प्रार्थना की—बहन! तुम नारी हो, नारी के हृदय को पहचानती हो। कृपा करके साल में केवल एक दिन ही सेठ साहब को मेरे घर भोजन के लिये भेज दो, इसी को मैं अपना सौभाग्य समझूंगी।

छोटी का नारी हृदय कुछ पिघल गया। उसने सेठ से कहा—यदि ये बिचारी प्रार्थना करती है तो एक दिन इसके यहां भोजन कर लीजिये!

सेठ जी को हां करनी पड़ी। छोटी का आदेश था, कैसे इन्कार करते।

बड़ी के हर्ष का पार न था। वह नाच उठी। गाने लगी—

आज नाथ हमारे घर आवेंगे।
आज नाथ हमाये घर आवेंगे।
हम हाथों से भोजन करावेंगे।
हम हाथों से भोजन करावेंगे॥

घर गई। ना-ना प्रकार के व्यंजन तैयार किये। पानी

में खस डाल दिया। घर को धूप से धूपित कर दिया। आज उसके हर्ष का पार न था।

सेठ जी आये। पर मन को कहीं डाल कर। चौकी पर बैठे। षट्रस व्यंजन थाल में आया। पर सेठ को कोई वस्तु पसन्द नहीं आई। किसी शाक में नमक ज्यादा था, मिर्च अधिक थी। खीर का स्वाद अधिक मीठा होने से बे-स्वाद हो गया गयी थी। पूरियां कोई जली हुई लगती थीं तो कुछ कच्ची ही मालूम होती थीं।

सेठ परेशान हो गया। कहने लगा–यह भोजन बनाया है या मजाक की। गंवारिन ही ठहरी, तू क्या जाने भोजन बनाना। आज का दिन ही बिगड़ गया।

जेनो शाक बिगड़यो।
तेनो दिवस बिगड़यो॥

अच्छा हो कोई शाक छोटी के यहां से आ तो कुछ खा-पी लिया जाय।

मन मसोस कर बड़ी चली। वह तो पति को सुखी देखना चाहती थी। जाकर उसके कहा–बहन! तुम्हारे यहां कोई शाक हो तो दे दो, उनको भोजन ठीक ही नहीं लग रहा है।

छोटी ने कहा–इसका कारण मैं जानती हूँ कि वे मन यहां छोड़ गये हैं, भोजन कैसे ठीक लग सकता है। ठीक है, मैं उनका मन तुम्हारे साथ भेज देती हूँ। उनको भोजन में रुचि आ जायेगी।

छोटी के घर आज हड़ताल थी। भोजन कौन बनाता। शाक कुछ था नहीं। जल्दी में कुछ हो भी नहीं सकता था।

उसने जरा पाड़े का हरा-हरा गोबर मंगाया, उसमें कुछ मसाले डाल दिये। एक तश्तरी में रखकर चाँदी का वर्क लगा दिया और दे दिया–ले जाओ।

सेठ जी ने दूर से ही देखा और प्रसन्न हुए। कितनी सुन्दर व्यवस्था ? तश्तरी में भेजा है। और उपर से नयनाभिराम चाँदी के वर्क लगे हैं।

चटनी आई और सेठ जी ने तृप्ति पूर्वक भोजन किया। (हंसी)

आस लोग हंसते हैं। पर, क्या आप प्रतिदिन गोबर जैसा विषय व्यंजन का भोजन नहीं खाते। कुमति के चक्कर में पड़ कर माया, मोह, क्रोध और विलासिता में नहीं फंसते। यह हंसने का नहीं, रोने का विषय है।

यदि आप मुक्ति चाहते हैं, यदि आप शान्ति चाहते हैं तो सुमति को अपनाइये !

काम, क्रोध, मोह और माया को तिलांजील देकर प्रेम का प्याला पीजिये ।

८ : भारत का आदि पुरुष

दुनिया के किसी तख्ते की बात हम नहीं करते। हम भारत की बात करते हैं।

वे सब के सब लोग जो उक्त शीर्षक का अर्थ यह लगाते हैं कि भारत में पैदा होने वाले सबसे पहले पुरुष का मैं वर्णन करने जा रहा हूँ, तो वह गलत होगा।

सोना अपने मैल से दूर किस दिन हुआ? यह बात कोई कारीगर बता सकता है। क्या कोई यह भी बता सकता है कि सोना मैल से किस दिन मिला। सोने के साथ गन्दगी किस दिन लगी।

हमें आज इस इतिहास को ढूंढना है। मनु इस कल्प का प्रथम पुरुष था। और इसके पूर्व की सृष्टि का भी कोई प्रथम पुरुष अवश्य होगा। सृष्टि तो बहुत बार बनी और बिगड़ी। सृष्टि बनना और बिगड़ना अनादि का क्रम है।

कुछ लोग युगलियों से सृष्टि की आदि मानते हैं। कुछ कल्प से। इसका ओर है न छोर। आदि है न अन्त।

परन्तु हमें यह देखना है कि इस कक्ष का, इस युग का आदि परम पुरुष कौन था।

इन्सान को पहला पुरुष नहीं कहा जा सकता। हां,

पहला सत्य हो सकता है। पुरुष नहीं।

आदि पुरुष को किसी माध्यम से स्वीकार करना होगा। समाज व्यवस्था किसने सिखाई? शासन व्यवस्था किसने सिखाई? धर्म व्यवस्था किसने सिखाई? वह कौन पुरुष है जिसने अपने पूरे जीवन को मानव जीवन में खो दिया।

आदि समाज व्यवस्था का प्रवर्तक आदि शासन व्यवस्था का प्रवर्तक और आदि धर्म प्रवर्तक कौन है? एक प्रश्न चिन्ह है।

इन्सान की कहानी बड़ी लम्बी है।

इन्सान बचपन में भगवान जैसा दिखाई देता है। जवानी में उसमें न जाने कैसा भूत घुस जाता है। और बुढ़ापे में चिन्तायें आ घेरती हैं।

बचपन जवानी बुढ़ापा,
तीनों ही तुझ पै आये।
आखिर वो दिन भी आया,
जिस दिन तुझे था जाना।
इन्सां कहाने वाले—
सुन अपना तू फसाना है।
बस खत्म है कहानी,
ये बुलबुला है पानी।
कोई ऐसा काम करजा,
भूले न जो जनता।
इन्सां कहाने वाले—
सुन अपना तू फसाना।

जिन्दगी और मौत की छाया में रहने वाले रे इन्सान

रोशनी देने वाला बन।

जो व्यक्ति केवल अपना ही स्वार्थ सिद्ध करता है, वह पेटू है। जो व्यक्ति अपने जाति भाई का पूरा-पूरा ध्यान रखता है, वह सामाजिक या नेता है। और जो व्यक्ति सम्पूर्ण विश्व का बिना किसी भेद भाव से ध्यान रखता है। सब के कल्याण में अपना जीवन अर्पण करता है, वह महा-पुरुष है।

उस आदि पुरुष की कहानी, महापुरुष की कहानी है। उस कहानी को जानने के लिए हमें इतिहास की खोज करना होगी। आख्यायिकायें, कथायें और किंवदंतियां हमें रास्ता बताती हैं।

इनके सहारे हमें मूल तक पहुँचना है। डाल पर लटकने से काम नहीं चलता। मूल बड़ा गहरा है।

हमारा साहित्य ३ धाराओं में बंटा हुआ है। जैन, बौद्ध और वैदिक।

जहां से हमारी संस्कृति का विकास उस मूल पुरुष तक पहुँचने के लिये उक्त तीनों धर्म धाराओं के साहित्य का सहारा लेना होगा।

संसार की सबसे पुरानी पुस्तक जिसमें हमारा प्राचीन-तम इतिहास मिलता है, वह है ऋग्वेद। बहुत लोग यह समझते हैं कि धर्म का उदय ऋग्वेद से हुआ। कुछ अख-बारों ने भी यह बात छुपा दी। पर, वस्तुतः पुस्तक से कोई धर्म न तो उदय होता है न हुआ। न होगा। पुस्तकें विचारों का संग्रह है। जीवन विकास से धर्म का उदय होता है। नर से नारायण हो जाते हैं। इन्सान भगवान

बन जाता है। ग्रन्थ धर्म के प्रचारक हो सकते हैं। उत्पादक नहीं।

धर्म आनादि काल का है। आप लोग व्याख्यान सुनने आते हैं तो श्रोता बन कर आइये। जैन, हिन्दू, ईसाई या मुसलमान बन कर न आइये। सत्य दिखाई दे, उसे स्वीकार करिये गलत दिखाई दे उसे मत लीजिये। शंका मालूम हो मुझ से शंका समाधान करिये। मैं अभी पूरा चातुर्मास रहने वाला हूँ।

देश का इतिहास देखो। जहां सच्चाई हो स्वीकार लर लो। संकुचित मनोवृत्ति का त्याग करो। परम्परा के नहीं सत्य के वफादार बनो। सत्य के प्रति निष्ठा पैदा करो।

ऋग्वेद हमारा पहला ग्रन्थ है, जिसमें वरुण इण्द्र, विष्णु और शिव के साथ ऋषभ देव का नाम आता है। ऋषभ देव पति धर्म के प्रतिपादक के रूप में आते हैं। ऋषभ देव को नमस्कार करने के मन्त्र भी आते हैं।

ऋग्वेद से किसी खास व्यक्ति को सिद्ध नहीं किया जा सकता। ऋग्वेद का सबसे प्रबल पुरुष यदि कोई है तो वह इन्द्र है। इन्द्र चाहे कोई भी रहा हो, ऋग्वेद में इन्द्र को सबसे बड़ा पद मिला है। ऋषभ देव का चिन्ह बैल है। आप साम्प्रदायिक मतभेद को भुला कर विशालता की ओर आइये।

वृदहारण्यक श्रीमद भागवत और यस पुराण में ऋषभ देव का अच्छा वर्णन मिलता है।

सबसे प्राचीन नाम मनु का है। १४ मन्वंतर हैं। ७वें

मनु से वर्तमान सृष्टि का आरम्भ है। पहला स्वायंमव मनु हुए ! हम पहले पुरुष का न कह कर उसके बेटे को महत्व नें तो क्या ऐतराज हो सकता है।

स्वयंभू मनु के पूर्व कोई शासक था, ऐसा इतिहास नहीं मिलता चाक्षुस के बाद प्रियवृत और उत्तानपाद का वर्णन मिलता है और फिर नाभि कुलकर का नाम आता है। नाभि तक कोई व्यवस्था नहीं थी। भक्ति के ऋषभ देव उत्पन्न हुए। यह वर्णन मैं श्रीमद भागवत के आधार से कहना चाहता हूँ।

श्रीमद भागवत के स्कंद और ४थे अध्याय में वर्णन आया है कि–नाभि राजा के पुत्र नहीं हुआ था। नाभि राजा ने ज्ञ किया। यज्ञ में से यस पुरुष स्वयं भगवान प्रकट हुए। ब्राह्मणों ने स्तुति की। भगवान प्रसन्न हुए। और कहा, ब्रह्मणों ! मैं तुम से खुश हूँ। क्या चाहते हो कहो ? ब्राह्मण बोले–प्रभु के दर्शन से बड़ा वरदान क्या हो सकतां है। किन्तु लेने वाला ज्यों-ज्यो मना करता जाता, दातार का मन बढ़ता जाता है।

ब्राह्मणों ने कहा–

महाराज हमें कुछ नहीं चाहिये। पर दातार मानने वाला थोड़े ही था।

बोले–ब्राह्मणों बोलों तुम्हारी क्या इच्छा है ?

ब्राह्मण–महाराज यदि आप की यही इच्छा है तो कृपया हमारे नाभि राज को ऐसा वरदान दीजिये कि जिससे आप जैसे रूप, गुण सम्पन्न पुत्र हमारे नाभि राज्य को मिले।

भगवान ने कहा–मेरे जैसा तो मैं ही हूँ। मैं स्वयं

अवतार लूंगा ।

ऐ जैनियों ! तुम्हारे और हिन्दुओं के आदि पिता एक ही हैं । तुम एक ही पिता के दो पुत्र हो । उनसे तुमको जीवन मिला है । उस जीवन वाहिनी के टुकड़े मत करो । विभेद रेखा खींचने पर धर्म और साहित्य तुम्हारा साथ न देगा । एकता की तरफ जाओगे तो तुम्हारा धार्मिक जीवन बन जायेगा ।

भारत का आदि पुरुष ऋषभ देव है ।

एक बार ३-४ साल पूर्व मुझे इन्दौर में आर. एस. एस. वालों ने गौहत्या विरोधी आन्दोलन के उद्घाटन के लिये आमंत्रित किया ! मैं गया । आज विशेष पार्टी का उत्सव है । इसलिये उसमें शरीक नहीं होता । ऐसा किसी-किसी का मन रहता है ! हर, मैं तो पार्टी भेद के बिना सम्मिलित होता हूँ और जो कुछ मुझे कहना होता है, कहता हूँ ।

पार्टियों ने आज कितना अन्धकार फैलाया है । कितनी फूट फजीहत पार्टी के नाम पर हुई है ? गिनती हैं ? सभी पार्टियाँ देश के उत्थान का दावा करती हैं । लेकिन देश को खण्ड-खण्ड कर दिया है । धर्म के नाम पर भी कितने ही युद्ध हुए पर, पार्टी ने तो मानवता को ही समाप्त कर दिया । पार्टी ने इस थोड़े से समय में २ महा विश्वयुद्ध दिये ।

राजनीति में स्वार्थ छिपा रहता है और धर्म सबसे पहला आघात स्वार्थ पर करता है । इसीलिये राजनीति और धर्म की नहीं पटती ।

हमारी देश की एकता ने तो पार्टी से हो सकती न धर्म की मान्यता से । क्योंकि पार्टियां भिन्न-भिन्न कोण से

शासन सूत्र चलाना चाहती है।

और आज धर्म के विभिन्न रूप हैं। हमारी जातियां भी एकता नहीं करा सकतीं। यदि हमें एक होना है, तरीका ढूंढना होगा। हमें एक ऐसा माध्यम ढूंढना होगा जो देश को एक सूत्र में बांध द। एक ही ढंग है—वह है 'गाय'!

गाय हमे एक सूत्र मे बांध सकती है। गाय का दूध हिन्दू मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि सब पीते हैं। सबको वह मीठा भी लगता है। वह किसी को बिना भेद भाव के एक-सा दूध देती है। इसलिये वह सबकी माँ है। सब लोगों ने एक ही माँ का दूध पिया है और एक माँ का दूध पीने वाले हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और पारसी, भाई-भाई हैं। सबका कर्त्तव्य है कि वे अपनी माँ की रक्षा करें।

उन्हें स्वार्थ साधना या, मेरी बात पसन्द नहीं आई। कुछ लोगों को मेरा वहां जाना पसन्द नही आया।

सत्य सबको कड़वा लगता है। सत्य कहता है—मेरा काम है कोई मानो या न मानो–उनकी मरजी की बात है।

जैन, वैदिक और बौद्ध, तीनों धाराओं से रोशनी पाने वाले अवंतिका के नागरिको। तुम अपना हृदय विशाल बनाओ। अवंतिका के नाम को उज्ज्वल करो। तुम उदार बनो। सत्य के प्रति आपका विश्वास हो यही कहना है।

सत्य को समझना होगा। हमें विचारना है कि हमारे इस युग का आदि संस्थापक कौन था?

अष्टम अवतार श्री ऋषभ देव ने जीवनक्रम दिया।

यम यमी संवाद आपने पढ़ा होगा। यमी अपने भाई यम को कहती है कि भैया मैं अब बड़ी हो गई हूँ। मैं तुझसे

शादी करना चाहती हूँ।

इस प्रकार युग के आरम्भ में भाई बहन का विवाह हो गया था। उस समय समाज व्यवस्था नहीं हुई थी। ऋषभ देव ने सोचा, इस मानव समाज को खून से बांधना होगा। दिल के टुकड़े (अपनी सन्तानों को) बांट दी। एक खानदान के बच्चे का दूसरे खानदान की बच्ची से विवाह शुरू हुआ। मोहब्बत का विकास हुआ। एक परीवार का स्वार्थ दो परिवार तक फैल गया। और क्रमशः आगे बढ़ने लगा। यह भगवान ऋषभ देव की देन है।

परस्पर विरोधी खून के मिलने से शक्ति होती है। एक ही खून से निर्बलता आती है। ज्ञान वाहिनियां नष्ट हो जाती हैं। अलग-अलग संगम से, महास्रोत बनता है।

भरत और बाहुबली के सामने सब से पहला प्रश्न आया, उन्होंने शादी की। अपनी बहनें ब्राह्मी सुन्दरी से नहीं, दूसरी से। भाई तो यह कर गुजरे। पर बहनों के लिये समस्या खड़ी हो गई। वे परम्परा के विरुद्ध दूसरे से शादी कैसे कर सकती थीं। उन्होंने दीक्षा ली। इस प्रकार ऋषभ देव को सबसे पहले अपनी लड़कियों का बलिदान समाज व्यवस्था के नाम पर देना पड़ा।

आइये जरा आगे बढ़िये। श्रीमद भागवत में सम्राट भरत का नाम आता है। जिनके नाम से इस देश का नाम भारत पड़ा।

ऋषभ देव ने शासन व्यवस्था भी कायम की। भरत बाहुबली को राज बांट दिये। भरत चक्रबर्ती बनने को उद्यत हुए। राज्य व्यवस्था निर्माण का पहला फल फिर ऋषभ

देव को देखना पड़ा । अपने सामने ही अपने खून के टुकड़ों को टकराते हुए देखा ।

भरत ने सब राजाओं को अपनी आज्ञा में चलने का आदेश दिया । पर बाहुबली क्यों मानने लगे । उन्होंने भरत को ललकारा । १२ वर्ष तक युद्ध हुआ । अन्त में तय हुआ कि खून खराबे से क्या लाभ ? राज्य के योग्य वही है, जो शक्तिशाली है । दोनों पर परस्पर युद्ध कर लें । द्वन्द्व युद्ध होना तय हुआ ।

दृष्टि युद्ध हुआ । भारत में कोई किसी से नहीं हारा । फिर पुष्टि युद्ध हुआ । और बाहुबली को राज्य छोड़ कर मुनि बनना पड़ा ।

तात्पर्य यह है कि स्वार्थ बड़े नेताओं का होता है । लाभ भी उन्हीं को ज्यादा मिलता है । 'तंत्र-फंत्र' को दुनिया नहीं समझती । गांवों में बहुत से गांधी को भी नहीं जानते ।

अच्छा हो ये बड़े लोग परस्पर युद्ध कर लिया करें । शास्त्रार्थ कर लें । कुश्ती कर लें, जो चाहे कर लें । बीच में बिचारी अबोध जनता तो न पीसी जाय ।

ऋषभ देव ने समाज मे रहे तब समाज व्यवस्था की । समाज के लिये मिट्टी आदि के बर्तन बनाने का तरीका निकाला ।

बीज से अन्न पैदा करने का मार्ग बताया । आत्मरक्षा के लिये वस्त्रादि के उद्योग निकाले । विचारों के आदान-प्रदान के लिये ब्राह्मी आदि लीपियों का आविष्कार किया । और राजनीति का परिष्कार किया ।

ये ही आदि नाथ हमारी संस्कृति के मूल उद्गम है। वृहदा रण्यक में देखिये। और काल्प सूत्र में देखिये। आदि नाथ पुराण में देखिये ! नाथ पंथियों के बंगाल का इतिहास देख जाइये। उनका मूल पुरुष कौन था ?

शिव को कुछ लोग बाबा आदम कहते हैं—ये बाबा आदम कौन ऋषभदेव ही तो हैं।

इनके पास नंदी गण' यह ऋषभ देव के बैल का चिन्ह है। और ये त्रिशूल। त्रिशूल है ज्ञान दर्शन और चरित्र की एकता का प्रतीक। आंख और पैर होने पर भी एक दूसरे पर विश्वास की जरूरत है। ज्ञान से आप देखते हैं चरित्र से आप चलते हैं और दर्शन से दोनों पर विश्वास करते हैं।

वैसे मुझे सबको मनु की सन्तान कहते में कोई हर्ज नहीं है। पर, ऋषभ देव परमात्मा के साक्षात अवतार हुए हैं। इसके पहले ७ अवतार हुए, पर वे कच्छ मच्छादि रूप में हुए। मानव रूप में यह पहला अवतार है।

ऋषभ देव ने केवल भारत वर्ष को ही नहीं पर सारे एशिया को सभ्यता और संस्कृति दी। यहां तक हम ऋषभ देव के गृहस्थ धर्य के आदर्श का वर्णन कर गये। अब आइये उनके उत्तर कालीन जीवन के विपव में भी विचार कर लें।

ऋषभ देव ने जैसे गृहस्थों को आदर्श मार्ग बताया ऐसे ही त्यागियों को भी आदर्श मार्ग बताया है।

वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र कुछ भी नहीं थे।

श्रीमद भागवत के पंचम स्कंध के पंचम अध्याय में भगवान ऋषभ देव ने उपदेश दिया—क्रोध न करो !

९ : योगीराज श्री कृष्ण

सूरदार किसी हाड़ मांस के पुतले से प्यार करता था। सूरदास के मन में भी एक लटक थी। वे किसी प्राथिवि पिण्ड के पीछे जा रहे थे। वे उसके पीछे प्राण देना चाहते हैं–पर वह मगरूर उनको फूटी आंख से देखना नहीं चाहती। पर, सूरदास तो उसके पीछे हाथ धोकर पड़े हैं।

एक रास्ता दीखा, उसको अपना पीछा छुड़ाने का। एक कुए के पास पहुँचे, सूरदार को कुए में धक्का देकर वह नौ दो ग्यारह हो गई।

सूरदास के मन में एक अवसाद आया। वे सोचने लगे, धिक्कार है मुझे जो मैं उस वासना पिण्ड के पीछे दीवाना हो रहा हूँ। उन्होंने आसक्ति से विरक्ति की ओर मोड़ खाली।

दुःख में भगवान का सहारा ही काम आता है। उन्होंने प्रार्थना की। कृष्ण आये। कौन आये, वे देख नहीं सके। हाथ पकड़ कर ऊपर ले आये। गरीबों और दुखियों की जब कोई रक्षा नहीं करता, तब भगवान रक्षा करते हैं।

दीन भगवान के रूप हैं। इनकी सेवा करो। बायबिल और कुरान में कहानी आती है, गॉड या खुदा कहता है–

ऐ इन्सानों ! तुम मुझे पाना चाहते हो ? पर तुम नहीं जानते कि मैं कहां रहता हूं । मैं दीन दुःखी और गरीबों में रहता हूँ ।

किसी प्यासे को पानी नहीं दिया, तो तुमने उसे नहीं, मेरे ठोकर मारी है । कुरान में लिखा है–कि उन लोगों से कयामत के दिन हिसाब मांगा जायेगा । और जिन्होंने मोहताजों को ठुकराया है, उन्हें खुदा सजा देगा ।

ईसा के द्वारा परमात्मा ने संदेश भेजा है कि मैं दीन दुःखी वेदना ग्रस्त प्राणियों में रहता हूँ । मैं उन दानियों की आंखों से झांकता हूँ जो गरीबों के लिए दौलत लुटाते हैं । और मैं उन गरीबों की आहों में रहता हूँ जो सहृदय व्यक्ति हृदय के टुकड़े-टुकड़े कर दे ।

हम आज उस महा पुरुष को जंयति मना रहे हैं, जो साधारण से महान बना । जो जन से भगवान हो गया । जिसने प्रतीज्ञा की थी ।

यदा यदाति धर्मस्य, ग्लानि भविति भारत ।
अभ्युत्थान मधर्मस्य, तदात्मान स्टजाम्ध्यम् ।।

–श्री मद भागवत

इस का अर्थ चाहे कोई कुछ भी करे, जो दीन दुःखी के सहायक होते हैं, वे भगवान ही होते हैं ।

भगवान महावीर ने गोशालक को बचाया । जैन समाज के दुर्भाग्य की बात है कि आज के कुछ जैनी कहते हैं–भगवान ने ईंट का जबाब पत्थर से दिया । इस अनुकंम्पा को वे पाप बताते हैं । यह उनकी बुद्धि का फेर है ।

महापुरुष के जीवन की अलौकिकता यही है कि–जिसका कोई नहीं होता, उसके वे होते हैं।

जब सूरदास को बाहर निकाला–अपना अहसान उस पर जाहिर न हो इसलिए बांह छुड़ा कर जाने लगे। सूरदास ने भी कच्ची गोलियां नहीं खायी थी। जबरदस्त ताकत लगा कर बांह पकड़ हीं तो ली। पर, बिचारे भूखे प्यारे सूरदास के पास शक्ति कहां थी, हाथ का झटका दिया, और अलग हुए। दुःखित हृदय से कविता फूट पड़ीं–

बांह छुड़ाये जात ही,
निर्बल जानि के मोहि।
हृदय छांडि जब जाओगे,
मरद बदौं गो तोहि॥

यह कौन कह सकता था। जिसके हृदय में भगवान के प्रति इतनी तड़प हो। हम आज योगीराज कृष्ण की बात कर रहे हैं। यद्यपि आज रात्रि को विक्रम लॉज में मुझे इसी विषय में बोलना है। पर, फिर भी कुछ संस्मरण सुनाऊंगा।

कहते हैं–कृष्ण की मुरली की ताकत बहुत बड़ी थी। वह चेतन को अचेतन और अचेतन को चेतन बना कर उनमें धड़कने पैदा कर देती थी।

गायें वृक्ष परिन्दे निछावर हो जाते थे। भगत के मन में अशंका हुई, मुरली में ऐसी क्या बात है जो वह भगवान के अधर शय्या पर पौढ़ती है। क्या आकर्षण है उसमें? जो वह बनबिहारी की लाड़ली हो गयी।

मालूम है, आपको इसका कारण ? इसका कारण है, वह (मुरली) ऊपर से नीचे तक खाली है। स्वार्थ नहीं है। खाली होने से बज उठती है । फूंक संगीत बन कर गूंज जायेगी। आप धर्म से कामनापूर्ति का चाह करते हैं। खाली होना पड़ेगा पाप इकट्ठे कर रखे हैं।

कालीये दमन की बात कह दूं । येतिहासिक लोग उसे नाग जाति का कहते थे। भक्तों ने उसे सहस्र फन का नाग माना। लोगों ने भगवान से प्रार्थना की कि हमें इस नाग से बचाओ। भगवान उसके फन पर जा बैठे। एक को दबाया, दूसरा उठ आया। अन्त में उन्होंने उसके दिल को पकड़ा। उसकी पत्नी प्रार्थना करने आई।

जब मैं यह कहानी पढ़ रहा था, मुझे इसकी संगति नही बैठ रह थी, अचानक महासती उज्जवल कुमारी जी जो अपनी समाज की देदीत्यमान रत्नावली की एक मणि हैं। जिनके उपदेशों में जीवन और जोश है । उन्होंने इस सम्बंध में रोशनी दी है । वे लिखती हैं, नाग एक वासना है। एक वासना को दबाते हैं । दूसरी वासना जाग जाती है।

कृष्ण ने उस कालिये नाग को वश किया। जिससे प्रजा भस्म थी।

कृष्ण चरित्र में कुछ ऐसी घटनायें हैं, जिससे लोग उन्हें भोगी और योगी मानते हैं। कुछ भी हो वे एक ऐसे आदर्श महापुरुष थे । जिन्होंने अपने पराक्रम से संसार को व्यवस्था सिखाई ।

उनके जन्म के समय कोई गाने वाली नहीं थी। और

देहोत्सर्ग के समय कोई रोने वाली नहीं थी। फिर भी उन्होंने अपने जीवनकाल में उनके सामने जो कुछ थी उस पर पूरा-पूरा शासन किया।

दृष्टि बदना पड़ेगी। आप कृष्ण के सम्बंध में सुनना चाहते हैं। महाभारत का कृष्ण दूसरा है। और सूर का दूसरा है। श्री मद भगवत का कृष्ण दूसरा है। तो पुराणों का कृष्ण दूसरा। यदि यों कहें कि जितने कवि उतने ही कृष्ण। जितने भक्त उतने ही भगवान तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

श्री मद भागवत का कृष्ण विष्णु का अवतार है। वह परस्पर ब्रह्मा का रूप है।

महाभारत का कृष्ण राष्ट्र निर्माता है। वह अन्याय का प्रतिकारक करके, धर्म की स्थापना करता है। इसके लिए वह अपनी प्रतीक्षा भी तोड़ता है।

उन्होंने दोनों तरफ भाई सगों को देख कर प्रतीज्ञा की थी कि मैं युद्ध में शस्त्र ग्रहण नहीं करूंगा। पर, भीष्म पितामह के प्रण के सामने रथ चक्र उठा कर अपनी प्रतीज्ञा तोड़ दी। अर्जुन को सफाई देते हुये कहते हैं–

हम भक्तन के, भक्त हमारे।
सुन अर्जुन प्रतिज्ञा मेरी, यह व्रत रखने हारे॥

—सूर

उन्हें अश्वथामा की जगह प्रतीज्ञा तोड़नी पड़ी। कर्ण का रथ फंस गया। धर्मयुद्ध के अनुसार अर्जुन ने कर्ण को मारना बंद कर दिया। क्योंकि कर्ण रथ का चक्कर कीचड़ से निकालने का उपक्रम कर रहे थे। उस समय कृष्ण ने

कर्ण को मारने को सलाह दी । युधिष्ठिर की राय से मां के पास जाने वाले दुर्योधन को कोपींन पहनने का भुलावा कृष्ण ने दिया ।

आखिर ये सब क्यों ? इस लिए कि वे चाहते थे, अन्याय को प्रोत्साहन न मिल जाये । वे चाहते थे उद्देश्य की सिद्धी । यदि अत्याचारी को दण्ड न मिला तो विश्व मैं एक उदाहरण हो जाता और जुल्म का बाजार गरम रहता ।

हिंसा की अपेक्षा हिंसा को प्रोत्साहन बड़ा पाप है ।

राम अपनी प्रतिज्ञा देखते थे । वे चाहते तो रावण को अन्य तरीके से भी पछाड़ सकते थे ।

मान कि उन्होंने बालि वध आदि विभिषण को मिलाकर युद्ध जीता । पर इसमें कोई प्रतिज्ञा भंग नहीं है । वे मर्यादा पुरुषोतम थे । लोक नायक के रूप में हमारे सामने आये हैं । युद्ध का संचालन करते हुए भी उन्होंने युद्ध नहीं किया ।

गर्दभिल्ल के सामने भी उनकी बहन का प्रश्न नहीं था । सतीत्व रक्षा का प्रश्न था । उनके उद्देश्य को समझो ।

उन पर ब्लेम लगाया जाता है कि महाभारत के युद्ध में लाखों लोग मर गये । पर, क्या आपको मालूम नहीं कि वे एक दुर्योधन के घर दूत बन कर नहीं गये थे । और यह कहा था कि आधा राज्य नही, केवल पांच गांव ही दे दे तो समझौता करा दूं ।

अन्याय का प्रतिकार करना इन्सान का फर्ज है ।

कृष्ण के कई रूप हमारे सामने हैं। हमें कृष्ण के वास्तविक रूप को समझना है।

यदि मुझसे कोई पूछे तो कृष्ण की वास्तविक विशेषता उनका गौ रक्षा का आन्दोलन है। प्राणिरक्षा का आन्दोलन भगवान नेमिनाथ ने चलाया जबकि गौ रक्षा का कृष्ण ने।

कृष्ण गौ राष्ट्रीय पशु बना दिया। इनके पूर्व गाय का महत्व हमारे यहां अवश्य था। पर जो महत्व इन्होंने गौ में पैदा कर दिया, उतना आज तक किसी ने नहीं किया।

भारत को गांधीजी ने चरखा दिया। कृष्ण ने भारत को गाय दी। गाय दूध पियो। अपनी व बच्चों की तन्दुरुस्ती बनाओ। बछड़ों से खेती कर लो। इस प्रकार गौधन को महत्व देकर राष्ट्र का बहुत बड़ा उपकार किया।

कृष्ण लीला सुनो। पानी भगवान के अंगूठे से लगा और जमना छुट गई। शायद कोई विश्वास करेगा, कोई न न भी करे। उन्होंने गोबर्धन पर्वत उठाया। भगवान महावीर ने मेरू को हिला दिया। लोग आशंका कर सकते हैं।

पर, हमें इसके अन्तर में पहुँचना है। गो के वर्द्धन का आन्दोलन किसी पर्वत से कम होगा? बड़ा मुश्किल काम है।

गाय की चेतना शक्ति कितनी अच्छी होती है, जरा इसकी बात भी कह दूं। हम पूना से नारायण गढ़ आ रहे वहां एक गौशाला है। उसमें ३७ गायें बछड़े बाकी थीं।

क्या विशेषता थी उनमें—दूध निकालने वाले ३ आदमी थे। वे जिस गाय का नाम लेकर बुलाते, 'रंभा इधर आओ' और रंभा झुंड छोड़कर आ जाती। इसी प्रकार सब गायें और उनके बछड़े भी आ जाते। केवल एक अबोध बच्चा था जो इस बात को नहीं समझता था। हम तो यह देख कर हैरान हो गये। मेरे मन में आया–इसमें कितनी चेतना शक्ति है। यह बकरी, गधी या भैंस में नही मिलेगी।

आज तो गुरु बुलावे—चेला नहीं आवे। यदि आप से अनुशासन ही सीख जायें तो बहुत है।

गौ का महत्व कृष्ण भगवान ने इतना बढ़ाया कि उसे सरकारी रूप दे दिया।

माहात्मा गांधी और मदन मोहन मालवीय ने तो यहां तक कहा था कि मैं आजादी को छोड़ सकता हूँ, पर, गौ को नहीं। यही कारण है कि उनका स्थापित 'गौ सेवा संघ' आज भी चल रहा है। गौ हमारे देश की रीढ़ है। इसी पर देश का कृषिप्रधान जीवन आधारित है।

गौ की पूंछ में ३३ करोड़ देवता रहते हैं। इस महत्त्व को लोगो ने नहीं समझा। वास्तविक बात यह है कि पूंछ की तरफ से ही जीवन-दायिनी दुग्ध-धरा, रोग-नाशिनी मूत्र-धारा और पवित्रता का प्रतीक गौमल प्राप्त होता है। लोगों ने उसकी पूंछ को मुंह पर फिराना शुरू किया, पर उसके मुंह को नहीं देखा। यह भी नहीं देखा कि यह कुछ खाती-पीती भी होगी या नहीं। लोग गाय की पूजा करते हैं, उसकी सेवा नहीं। पूजा करने का अर्थ है—उसकी सेवा करना।

हम इन्दौर में थे। हमारे स्थानक के सामने एक लंगडी गाय पड़ी रहती थी। लोग आते मन्दिर से और पूंछ मुंह से लगा कर चल देते। उसको पानी पिलाने की भी लोग जरूरत नहीं समझते थे। बड़े गौ-भक्त बन गये।

राष्ट्रीय वाद्य की जरूरत हुई। कृष्ण ने मुरली दी! बांसलिया, बना ली। स्वर साधना चाहिये। बड़ा सस्ता वाद्य-यन्त्र है।

मैं अभी तक राष्ट्रीय रूप कह गया। धार्मिक विचार भी बड़े सुन्दर दिये हैं। कृष्ण की इनमें से केवल एक बात कह कर आज का प्रवचन समाप्त किया णाएजा।

कृष्ण, बलदेव और अन्य दो साथी वन-क्रीड़ा को गए। वन-भ्रमण से शरीर और मन बलवान हो जाता है। वन में रात हो गयी। चारों ने विचार किया कि रात्रि का समय है। चोर-डाकू, हिन्सक प्राणी या सांप-बिच्छू का डर है। एक-एक प्रहर चारों पहरा दें।

एक व्यक्ति ने पहरा देना शुरू किया। तीन सो गये। सूर्यास्त होते ही एक दैत्य आया। वह बोला—मैं तुझे और तेरे साथियों को खाने आया हूँ।' यह सुन कर पहरेदार ने कहा-–'होश सम्भाल कर बात कर, खाने-पीने की बात फिर करना, पहले जरा मुझसे दो-दो हाथ कर ले।

दोनों का घमासान युद्ध हुआ। दोनों क्षत-विक्षत हुए थक गये और चले गये। राक्षस और पहरेदार दोनों नहीं हारे।

पहला सो गया। दूसरा जगा। दूसरे से भी राक्षस का युद्ध हुआ। उससे भी बराबरी में छूटने के कारण राक्षस

वन से चला गया। वह पहरेदार सो गया। तीसरे पहर बलराम का नम्बर आया। राक्षस पुनः शक्ति संचय करके आया, पर बलराम को न हरा सका और वन में भाग गया। बलराम कृष्ण को जगा कर सो गये।

कृष्ण के सामने भी राक्षस की भयानक समस्या आ कर खड़ी हो गयो। राक्षस से आकर कहा–'मुझे भूख लगी है। मैं खाऊंगा।'

कृष्ण ने मुस्करा कर कहा–'आपका कहना बिल्कुल ठीक है। आपको भूख लगी—अवश्य खाना चाहिए। शांति का उत्तर पाकर दैत्यराज कुछ शान्त हुए। बड़ी बढ़ी चढ़ी बातें करने वाला कुछ ठण्डा हुआ। कृष्ण ने कहा—'आप तो बहुत ऊंचे खानदान के हैं।'

दैत्य जरा छोटा हो गया। कृष्ण ने फिर कहा–'आपकी मां तो साक्षात् देवी हैं। और पिता···पिता की तो मत पूछिये। उन्होंने खानदान का नाम ऊंचा कर दिया।'

दैत्य तो और छोटा पड़ गया।

आदमी निन्दा से चढ़ता है, तारीफ में छोटा होता है। धीरे-धीरे राक्षस की तारीफ के पुल बांध दिये। वह इतना छोटा हो गया कि कृष्ण ने उठा कर जेब में डाल लिया।

सुबह हुआ। तीनों साथी उठे। खून से लथपथ हो रहे थे। कृष्ण ने पूछा—,भाई क्या बात है? तुम्हारा शरीर क्षत-विक्षत क्यों है?'

सबने राक्षस से टक्कर की बात कही। एक से एक बढ़ बढ़ कर बहादुरी बता रहे थे। मैंने यों किया और मैंने यों किया। अपको क्या मालूम, राक्षस से पाला पड़ता तो

पता चलता ।

कृष्ण ने मुस्करा कर जेब से निकाल कर राक्षस को रख दिया । और कहा—यही था रात का राक्षस ?

वे दंग रह गये, और पूछा—यह इतना छोटा कैसे हो गया ।

कृष्ण बोले—तुम्हारे अभिमान ने इसे इतना बढ़ा दिया था, और मेरी नम्रता ने इसे इतना झुका दिया । तुम्हीं इसे राक्षस बनाया ।

कृष्ण चरित्र के ऐसे अनेकों उदाहरण हैं । जिनसे हम अपनाजीवन, जीवन बना सकें । आशा है आप कृष्ण के जीवन से जों सीखना चाहेंगे, अवश्य सीखेंगे । उन्होंने जीवन के हर क्षेत्र में अनोखा आदर्श उपस्थित किया है ।

१० : रक्षा बन्धन

मैं आज तक त्यौहार विशेष पर बोलने जा रहा हूं। आज बहनों का त्यौहार है। लेकिन यह त्यौहार बहनों तक ही सीमित नहीं है। यदि इस त्यौहार में से भाइयों को बाद कर दिया जाय तो क्या यह त्यौहार-त्यौहार रह सकेगा ?

अकेला भाई या अकेली बहन इस त्यौहार को नहीं मना सकती। जिस बहन के भाई नहीं होता, वह भाई बना कर राखी बांधती है और जिस भाई के बहन नहीं होती वह बहन बना कर राखी बंधाता है। यह भाई और बहन के पवित्र प्यार का धोतक है। भाई और बहन की पारस्परिक ममता को प्रोत्साहन देता है।

संसार में यदि कोई सच्चा और प्राकृतिक रिश्ता है तो वह केवल भाई और बहन का। शेष रिश्ते तुम्हारे मन-घड़ंत रिश्ते हैं।

एक पिता के पक्ष को लेकर पिता बन जाता है। दूसरी माँ के पक्ष को लेकर माता बन जाती है। अगर भाई और बहन का रिश्ता दुनिया से अलग कर दिया जाय, तो फिर रह ही क्या जाता है। शेष रिश्ते तो कल्पना मात्र हैं। यह

रिश्ता ही सहज प्राप्त होने वाला रिश्ता है। दोनों सोहदर कहलाते हैं। पेट से एक ही रिश्ता मिला है—भाई और बहन का।

दुनिया के किसी भी कौने में चले जाइये, भाई और बहन के सम्बोधन से किसी को भी पुकारिये, कोई आपत्ति किसी को नहीं हो सकेगी।

जरा गढ़वाल, तिब्बत आदि पहाड़ी प्रदेश में चलिये। किसी को 'माँ के पवित्र सम्बोधन से पुकारिये तो? इस 'माँ' के एकाक्षरी सम्बोधन के साथ ही सैकड़ों लानतें आप पर पड़ जायेंगी। लोग कहेंगे-यह तेरे बाप की कब बहू बनने आई थी, जो तू इसे माँ कहता है? आपनी-अपनी संस्कृति और विचारधारा है। आप नहीं रोक सकते।

पर, जरा किसी को बहन कह कर पुकारिये उसके हृदय में रोमांच हो जायेगा। बहन और भाई का परम पवित्र रिश्ता है। जिसे महात्माओं की भी, जो संसार के सब नाते रिश्ते छोड़कर आये, विरासत में प्राप्त हुआ है।

आप सब हमारे भाई और बहन हैं। यदि आप हमारे भाई बहन नहीं तो फिर क्या हैं? इसके सिवा और क्या रिश्ता हो सकता है?

सौ-पचास साल पहले पाश्चात्य देशों में भारत एक जंगली और असभ्य देश माना जाता था। वे लोग भारतीयों को गंवार कहते थे। अमेरिका में भारतीय गंवारों को सभा में खड़े होने की भी आज्ञा नहीं मिलती थी।

एक बार अमेरिका में एक सर्व धर्म सम्मेलन हुआ। इसमें भारत को भी अपना प्रतिनिधि भेजने का आमन्त्रण

मिला ।

भारतीय प्रतिनिधि के रूप में स्वामी विवेकानन्द अमेरिका पहुँचे । भारतीय प्रतिनिधि क्या बोल सकता है ? और उसे समय भी क्या दिया जा सकता है । लेकिन क्यों कि आमन्त्रण दिया है । अतः समय देना आवश्यक हुआ । दो मिनट का समय दिया गया ।

भारतीय दर्शनों का प्रतिनिधित्व लेकर जाने वाला दो मिनिट में क्या विचार व्यक्त कर सकेगा । यही एक विचारणीय प्रश्न था । स्वामी विवेकानन्द खड़े हुए और सम्बोधन किया-

'भाइयों और बहनों !'

और इस सम्बोधन के साथ ही उपस्थित श्रोताओं की ओर आत्मदृष्टि से अवलोकन किया । जनता के जीवन में यह सम्बोधन पहली बार ही आया था । वह ताली बजाने में इतनी व्यस्त हुई कि पांच मिनिट इसी में व्यतीत हो गये ।

उन्होंने मिस्टर और मिसेज के सम्बोधन सुने थे । उन्हें नहीं मालूम था कि भारतीय संस्कृति इतनी विशाल है-जो वसुधैव कुटुम्बकार मानता है ।

स्वामी विवेकानन्द पारगामी पण्डित थे । उनमें भारतीयता कूट-कूट कर भरी थी । उनका चातुर्य चरम सीमा को पहुँच चुका था । उनका वक्तृत्व आरम्भ हुआ और सब को तब आश्चर्य हुआ जब उन्हें पता चला कि अकेला भारतीय प्रतिनिधि दो मिनिट के बदले दो घण्टे बोल गया ।

भाई और बहन के सम्बोधन में वह जादू था-

भाई और बहन के रिश्ते में हमारा द्वेष मिट जाता है वहां पुत्र पुत्री के अधिकार एक हो जाते हैं।

मैं तो गाय, भैंस आदि सब दुधारू पशुओं का दूध पीने वालों सबको भाई बहन के रिश्ते से आवद्ध करता हूँ। इस में मेरी कोई गलती भी नहीं है। एक माँ का दूध पीने वाले आपस में भाई बहन न होंगे तो क्या होंगे ?

आज रक्षा बन्धन है। गाय और भैंस तुम्हारी माँ हैं। उनकी रक्षा की प्रतिज्ञा करना आपका कर्त्तव्य है।

मैं गत वर्ष बम्बई में गौवध विरोधी आन्दोलन चला रहा था। केवल बम्बई से ५६ लाख टन मांस विदेशों को जाता था। हमारे देखते देखते यह सब बन्द हो गया।

लोग पशुवध का विरोध करने पर हमें लांछन देते हैं। कहते हैं-वे लोग कहते हैं-जो जैन नाम लिखने में गौरव समझते हैं और मिनिस्टर हैं, कार्पोरेट हैं-'हम पशुवध को नहीं रोक सकते। क्योंकि यदि किसी वैष्णव, अग्रवाल, माहेश्वरी आदि की सब्जी रोक दी जाय तो कितना अनर्थ हो। इसी प्रकार मांस भोजियों का मांस सब्जी है।

मैंने कहा-यहां ही आपकी भूल है, यदि कोई व्यक्ति देश का गद्दार हो, देश की रोटी रोजी छीन ले तो आप उसे क्यों रोकने हैं। वह कहता यह तो उसका पेशा है। चोरी उसका रोजगार है। पर, आप उसे रोकते हैं।

जरा हिसाब लगाइये। एक गाय या भैंस को मार कर उसके मांस से ३०-४० या ५०-६० आदमी का पेट भर सकता होगा। और केवल मांस भी कोई नहीं खा सकता। बहरहाल उसे साथ में अन्य वस्तु भी खानी पड़ेगी। केवल

जिव्हा का स्वाद है। अब दूसरी तरफ एक भैंस या गाय घास खाकर जीती है। और बदले में मूत्र' गोबर और दूध के अलावा बछड़े और बछड़ी देती है। जरा दस वर्ष का हिसाब लगा कर देखिये, वह कितने आदमी की रोटी-रोजी बनती है। कितने खाद का उत्पादन करती है, और उसका चमड़ा व हड्डी से कितनी देश की समृद्धि बढ़ती है।

इसलिये इस राष्ट्रीय संपति का संहार करने वाले इन डाकुओं और लुटरों को सजा देने के तुम्हारे पास कोई कानून नहीं। कैसे कानूनदां हैं आप ?

पूना के पास खिड़की नामक दो-तीन मील पर एक स्थान है। एक बार हम वहां पहुँच गये। चील-कौवे उड़ रहे थे, इससे हमने अनुमान लगाया कि यहां कोई बूचड़-खाना होगा। हम पास गये, उस पर लिखा था, गौवों की बधशाला ! हम अन्दर घुस गये। कितना विभत्स हश्य था वह। यदि तुम देखो तो सम्भव है, कुछ लोग बेहोश भी हो जाओ।

चारों ओर रक्त-रंजित भूमि थी। बड़े-बड़े भैंसे काट कर उनका चमड़ा उतार दिया गया था। वहां छः-सात भैंसे रोज कटते हैं। काटने वालों का शरीर खून से लथपथ था। हमें अन्दर देख कर वे घबरा गये। शायद हमें सरकारी आदमी समझ रहे थे।

वे बाहर आये और कहने लगे, हमें यह काम करना पड़ता है क्या करें ? पेट का काम है।

यदि उन मांस खाने वालों को भी उस करूण हश्य को देखने का अवसर मिले तो उनका हृदय भी पिघल जाये।

इन पशु धन को नष्ट करने वालों ने देश का दूध नष्ट कर दिया। ये देश के दुश्मन हैं। इन्हें चोर-डाकू की तरह सामाजिक जीवन व्यतीत करने का कोई अधिकार नहीं। इन्हें तो जेल की दीवारों में बन्द होना चाहिये था।

मनुष्य का मस्तिष्क कुत्तकी होता है।

एक बार कृष्णामाचारी ने बयान दिया कि हमारे देश में दो करोड़ पशु अनुपयोगी हैं। ये उपयोगी पशुओं का घास दाना खा जाते हैं। मैंने उन्हें एकदम लिखा आप ही घास उत्पन्न करते हैं। मैं तो बड़ा हैरान हूँ, ये कुत्तर्कें कहां से खड़ी कर लेते हैं।

हमारे एक जेठ मल जी महाराज काठियावाड़ में हैं। वे बड़े सख्त हैं। किसी राजा को गलती करते देखे तो दाड़ी पकड़ लें। एक बार एक राजा उनके व्याख्यान में आया। उसे उन्होंने कहा तू सात बार नर्क में जायेगा। पशुओं को मार कर तूने अपने पेट को पशुओं का कब्रिस्तान बना दिया।

आज रक्षा बन्धन है। मैं भाइयों और बहनों से निवेदन करूंगा कि वे इन मूक पशुओं की रक्षा का आज बन्धन लें। जिन वस्तुओं में पशु हिंसा हो वह उपयोग मे न लें।

भगवान महावीर ने तो सारे विश्व को भाई-भाई कहा है।

जगदीश चन्द्र वस्तु ने वनस्पतियों का हंसना और रोना सिद्ध कर दिया है।

वनस्पति में एक लजवन्ती होती है, जिसे पुरुप छुए तो सुकड़ जाती है। इसी प्रकार एक लजवन्ता भी होता है जो

किसी बहन के छूने से सुकड़ता है। नर और मादा–भाई और बहन का नाता सारे चराचर विश्व में व्याप्त है।

मैं आज रक्षा बन्धन के सम्बन्ध में कहने जा रहा हूँ।

रक्षा बन्धन क्यों आरम्भ हुआ ? इसकी परम्परा क्या है ? इसे किसने चलाया आदि कोई इतिहास इसके लिये हमें नहीं मिलता।

यदि मनु ने या भगवान ऋषभ देव ने चार वर्ग बनाये तो उनके चार काम भी बनाये। संसार में चार प्रकार के ही काम हैं। कुछ काम बुद्धि से सम्बन्ध रखते हैं। कुछ काम कृषि, रक्षा और निर्माण से सम्बन्ध रखते हैं। कुछ काम वितरण से सम्बन्ध रखते हैं और कुछ काम सेवा से सम्बन्ध रखते हैं।

इन चार कामों में जिनमें जिसकी अधिक योग्यता थी वह काम उसके जिम्मे हुआ। बौद्धिक काम करने वाले ब्राह्मण कहलाये, रक्षा, कृषि और निर्माण करने वाले क्षत्रिय कहलाये। देश में वितरण और विनियम करने वाले वैश्य कहलाये, तथा सेवा का काम करने वाले शूद्र कहलाये।

प्रत्येक व्यक्ति में चारों कामों की योग्यता होती है। जिसमें किसी एक काम का भी अभाव हो जाये तो वह जीवित नहीं रह सकता। इसीलिये हमें शूद्रों का अपमान नहीं करना है। वे पैर हैं, प्रगति देते हैं उनका नाम चूड़ा अर्थात मुकुट है। महत्तर अर्थात बहुत बड़ा आदमी है, और गांधी जी के शब्दों में वह हरिजन हैं।

आप लोग किस की पूजा करते हैं ? सिर की या पैर की ? यदि आप पैर की पूजा करते हो तो हरिजन को अप-

मानित करने का आपका क्या अधिकार ?

चार वर्णों के अनुरूप ही चार पर्व मनाये जाते है। ब्राह्मणों का पर्व रक्षा बन्धन है। इसे नारियली पूनम भी कहते हैं। इसी दिन से शिक्षण क्रम आरम्भ होता है ! उपवीत ग्रहण कर विद्यार्थी विद्याध्ययन आरम्भ करता था। और ब्राह्मण लोग रक्षा का बन्धन देते थे। देखना हम संसार को शिक्षित बनाने का काम आरम्भ करते हैं, तुम सब विघ्नों को टालने का प्रयत्न करना।

इसी प्रकार विजय दशमी क्षत्रियों का, दीपावली वैश्यों का और होलिका शूद्रों का त्यौहार बना। पर चारों त्यौहार चारों वर्ण समाज प्रेम और श्रद्धा से मनाते हैं। ये सामाजिक सम्मेलन के प्रतीक हैं।

तो हम रक्षा बन्धन की बात करते हैं। निर्बल बलवान को प्रेम के कच्चे धागे से बीधता है यह रक्षा बन्धन हैं।

प्रकृति के नियमानुसार बहन–भाई को रक्षा का बन्धन देती है। इसी प्रकार हमारे यहां राजपूताने की बहनों ने मुसलमानों तक को रक्षा बन्धन भेजा है, और देश की दुश्मनों से रक्षा की है।

नागौर के राजा मान सिंह पर गुजरात के शासक फिरोजशाह ने आक्रमण कर दिया। किला घेर लिया गया। स्वयं की सेना मुगल बादशाह को अर्पण कर दी गई थी। किले के फाटक बन्द कर दिये गये। अन्दर ही अन्दर घुल-घुल कर मरने की नौबत आई। मानसिंह की लड़की पन्ना किले की दीवार पर खड़ी देश की दुर्दशा का नजारा देख रही है। उसे बचने का कोई उपाय नहीं सूझा, अचानक

सुदूर दृष्टि जाने पर एक किला दिखाई दिया। वह अरिकंद का किला है। उमादे सिंह इसका शासक है। यदि उमादे सिंह उसकी मदद कर दे तो किला बच सकता है।

वह अपने माता-पिता से निवेदन करती है कि क्यों न उमादे सिंह को मदद के लिए बुलाया जाये। राजपूत लोग वीर होते हुए भी परस्पर दुश्मनी निभाने में भी कम नहीं होते। उससे भीख मांगने से मर जाना बेहतर है। मानसिंह ने अभिमान से कहा। तब बिचारी पन्ना निराश हो गयी। वह अपनी दादी के पास गयी और पूछा—'दादी यदि उमादे सिंह को आमन्त्रण देकर बुलाया जाय तो क्या हानि है ?

दादी तैयार हो गई। पन्ना ने दो धागे उमादे सिंह के पास भेज दिये। शत्रुओं की आंख बचाता हुआ इस उमादे सिंह के पास पहुँचा और रक्षा बन्धन हाथ पर बाँध ही तो दिया।

उमादे सिंह खानदानी बैर को भूल गया। और रक्षा बन्धन की लाज बचाने फिरोजशाह की सेना पर टूट पड़ा। फिरोजशाह भाग गया। मानसिंह आजाद हो गया।

और इसी रक्षा बन्धन के कारण उनका पैत्रिक बैर मित्रता में परिणत हो गया।

यह है रक्षा बन्धन का महत्व !

जैन लोग रक्षा बन्धन का सम्बन्ध विष्णु मुनि से जोड़ते हैं। जैन समाज को नमुची के जमाने में भारी संकट आया। राजमन्त्री ने सब जैनों को ढाई डग जमीन पर रहने का आदेश दिया। जनता मस्त हो गयी। रक्षा का बन्धन विष्णु मुनि पर आया। उन्होंने वैक्रियलब्धि द्वारा दो कदम में सारी

जमीन नाप दी और तीसरा कदम उस मन्त्री की छाती पर रखा, जो मर गया। जब संघ पर संकट आता है तब ऐसा करना ही पड़ता है।

कालिकाचार्य पर भी यह घटना घटी है, और आपके उज्जैन में ही। मैं फिर कभी बतलाऊंगा कि महाकाल की कहानी क्या है। ये मिधारा की पुरी किस प्रकार गर्वोन्नत है।

आप आज के दिन प्रतिज्ञा करो कि आप प्राणी मात्र रक्षा का वचन दोगे ?

रक्षा बन्धन यही हमें शिक्षा देता है। हम हाथ में धागा बांध दें, और जीवन में प्रेम को स्थान दें। भाई और बहन का यह पवित्र त्यौहार यदि तुममें प्रेम का संचार कर सका तो तुम्हारा यह त्यौहार मनाना सार्थक होगा।

११ : क्रिया और भावना

मैं आज क्रिया और भावना के सम्बन्ध में कहने जा रहा हूँ। कहिये क्रिया बड़ी या भावना ?

कुछ लोग केवल क्रिया को ही महत्त्व देते हैं। तिलक छापा, गेरूआ वस्त्र या श्वेत वस्त्र देखे और समझा दिया कि 'महात्मा' हैं। यही भ्रम है। आत्मा का पता कपड़े से लगाना सम्भव नहीं।

आप अहिंसक हों ! ठीक है आप समझते हैं कि मारने में पाप है। तो मैं पूछता हूँ भाई बचाने में क्या हुआ ?

दो डाक्टर हैं। दोनों के पास दो मरीज हैं। एक बीमार अमीर है, दूसरा बीमार गरीब है।

अमीर के पास खर्च करने को पैसा है। उसके पेट में एक भयानक रोग है, वह डाक्टर से कहता है-डाक्टर साहब, मेरे पेट की भयानक पीड़ा आप ठीक कर दीजिये, आपकी सेवा में १० हजार रुपये पेश करूंगा।

इसी प्रकार के रोग वाला दूसरा गरीब मरीज दूसरे डाक्टर के पास जाता है और डाक्टर को अपना रोग बताता है। डाक्टर देखता है और कहता है—इस रोग में ये-ये दवायें, इतने इन्जेक्शन और यदि जरूरत हुई तो आपरेशन भी

करना पड़ेगा। क्या तुम इतने रुपये खर्च कर सकते हो ?

रोगी आर्थिक संकट का मारा रोग की साध्यता से असाध्यता को पहुँचा चुका था, उसने कहा—डाक्टर साहब, जिसके पास दूसरे समय के भोजन का प्रबन्ध न हो, वह भला इतना खर्च कहां से उठा सकेगा।

डाक्टर दोनों का दास था। उसने कहा–अच्छी बात है, यदि तुम खर्च नहीं उठा सकते तो हम खर्च उठावेंगे। बहुत लोगों से पैसा मिलता है, एक से न भी सही।

औषधदान का' चिकित्सा का महान पुण्य है ! वह बुद्ध जिसे दुनिया भगवान के नाम से पुकारती है। कहते हैं– औषधदान महान दान है। यह अनुकम्पा दान है।

डाक्टर अपना अहोभाग्य समझता है मैं सेवा करूंगा।

दोनों डाक्टरों ने अपने-अपने रोगियों की चिकित्सा आरम्भ की।

अमीर को आपरेशन करने के लिये क्लोरोफार्म सुंघाया गया। जब सेठ बेहोश हुआ। डाक्टर साहब की नजर जेब पर पड़ी। जेब में एक लाख के नोट नजर आये। सोचा-सेठ ठीक हो जायेगा तो दस हजार देगा और मर गया तो एक लाख हत्थे चढ़ेंगे। क्यों न एकाध चाकू इधर उधर मार कर सेठ की जीवन लीला समाप्त कर दी जाय।

एक लाख के लोभ का भूत सवार हुआ। आपरेशन शुरू हुआ। निश्चित स्थान के आपरेशन के बदले दूसरी ओर चाकू घुस गया। और रोगी का स्ट्रेचर आपरेशन टेबल से हटा दिया। डाक्टर ने सोचा सेठ की जीवन यात्रा पूरी हो गई। बाहर आकर कहा-सेठ जी का आपरेशन कर दिया

है। ठीक हो जायेंगे। थोड़ी देर में होश आ जायेगा।

पर डाक्टर साहब तो खुशिया मना रहे हैं कि सेठ परमधाम पहुँच गया। पर, डाक्टर साहब की साहब को आश्चर्य में डालने के लिये सेठ जी उठ खड़े हुए। आपरेशन ठीक रोग पर ही हो गया।

सब लोगों ने डाक्टर की कार्य-कुशलता को प्रशंसा की। ठीक हो जाने के बाद डाक्टर साहब के सम्मान में एक पार्टी दी, जाकर दस हजार रुपये भेंट किये गए।

डाक्टर की प्रशंसा के पुल पत्रों ने भी बांध दिये।

जरा भाई के दूसरे वार्ड में भी चलिये। डाक्टर उस गरीब रोगी की सेवा में उसी प्रकार तन्मय है, जिस प्रकार भक्त अपने भगवान की सेवा में। तन मन धन सर्वस्व लुटा कर भी वह उस दीन की रक्षा करना चाहता है। परिस्थिति देखकर उसका आपरेशन करता है। आपरेशन में पूरी साव-धानी बरतता है, फिर भी कोई जीवनिय रक्त वाहिनी कट गई। रोगी के भाग्य ने साथ न दिया। आयुष्य कर्म का संचय समाप्त हो गया, प्राण पखेरू उड़ गये। डाक्टर की आत्मा को महान खेद हुआ।

दुनिया के तमाशबीनों ने डाक्टर को हत्यारे की पदवी से विभूषित किया। सारी दुनिया ने उसके अपयश की गाथा मिर्च मसाले सहित घर-घर जाकर सुनाई। जनता ने दोनों डाक्टरों का फैसला कर दिया।

और उज्जैन वासियों! मैं यह फैसला तुम्हारे सामने रखता हूँ। तुम जरा बता दो इन दोनों में कौन-सा डाक्टर

धर्मात्मा है और कौन सा पापी ? क्या जनता का फैसला वास्तविक फैसला है ? कहिये-बचाने वाला डाक्टर धर्मात्मा है, जिसके हाथ से रोगी मर गया, यह डाक्टर धर्मात्मा है।

सब-जिसके हाथ से रोगी मर गया वह धर्मात्मा है। क्योंकि उसकी भावना शुद्ध थी। और बचाने वाला पापी है, क्योंकि उसकी भावना अशुद्ध थी।

सज्जनों मरंजाना अलग बात है और मार देना अलग बात है। लाखों प्राणी मरते रहते हैं। मरना जीना किसी के हाथ की बात नहीं है। पर उसमें हम आप अपनी भावना का योग देते हैं, वही हमारे शुभाशुभ कर्म का कारण बनती है।

याध्शी भावना यस्य, सिद्धि र्भवतिसाध्शी

उन डाक्टरों को क्रिया का कुल मिलेगा या भावना का ?

सब-भावना का।

बंध क्रिया के अनुसार नहीं भावना के अनुसार होता है।

किसी भी धर्म शास्त्र को देख जायें, सब जगह भावना को ही प्रधान पद दिया है। जैसे शास्त्र की बात कहूँ-

तंडल मच्छ की कहानी आपने सुनी है। वह महा सागर के महान मगर मच्छ की आंख पर होने वाला चावल की आकृति का एक मच्छ होता है। वह बैठा-बैठा देखता है। क्या देखता है-

हजारों मच्छ कच्छ उसके पेट में आ जाते हैं। और प्रश्वास के साथ ही रमते खेलते वापिस आ जाते हैं। तंदुल मच्छ सोचता है कि यह मच्छ बड़ा मूर्ख है। इतने मच्छ पेट में आ जाते हैं और यह उन्हें उगल देता हैं। मेरे जैसा होता तो इनमें से एक को भी बाहर नहीं आने देता।

वह मच्छ मर कर ७वी नर्क में जाता है। कहिये है न भावना का प्रभाव ?

दो व्यक्ति खिड़की में खड़े हैं। सड़क पर हाथापाई हो रही है। मारा मारी में चोट भी आई। एक ऊपर से देख कर विचार करता है–अच्छा हो जरा लट्ठम लट्ठा चले। देखने में मजा आ जाय।

दूसरा विचार करता है कि क्यों ये नाहक खून खराबी करते हैं। ऐसा कौन-सा उपाय है कि जिससे इन के परस्पर प्रेम हो जाय। मौहल्ले की इज्जत जाती है। बच्चों पर बुरा प्रभाव पड़ता है–हे भगवान ! इनको सदबुद्धि दे।

बतलाइये दोनों अलग खड़े हैं। लड़ाई से कोई वास्ता नहीं। उनको क्या फल हुआ क्या भावना ने कुछ किया ?

पाप पुण्य भावना के आधार से चलते हैं।

भगवती सूत्र की बात कह दूं। भगवती सूत्र के प्रश्नोत्तर में चलता हूँ।

'अहो भगवान साधु को सांप्रायिक क्रिया लगती है या इरियावही की ?

उत्तर मिलता है–'गौतम ! जब साधु अविवेक पूर्वक कोई क्रिया करता है तो सांप्रायिक क्रिया लगती है और

मगर मच्छ का मुंह खुल्ला है, उसके श्वास के साथ विवेक पूर्वक क्रिया करता है तो दूरियावही को क्रिया लगती है।

हमारे कुछ भाई सुपात्र को दान देने में ही धर्म मानते हैं। कुपात्र दिये गये दान मैं पाप बताते हैं।

जरा भारत के अतीती में चलिए–ये धर्म रुचि अणगार हैं मास क्षमण का पारणा है। सुपात्र है कौन कहता है कि सुपात्र नहीं। इस सुपात्र को कड़वी तुम्बी का आहार देने वाली नागश्री ब्राह्मणी अभी तक नरक में सल रही है। क्यों? क्या इसीलिये कि उसकी भावना शुद्ध नहीं थी। फिर सुप्रात्र का क्या प्रश्न रहा। भावना प्रधान रही।

दूसरी तरफ देखिये। ये चन्दनवाली है। ये भगवान महावीर छमास के तपधारी। तिरण-तारण की जहाज। घर आकर वापिस हो रहे हैं। चन्दना जो प्रभु को देखकर हर्ष से आसू सुखा चुकी थी, पुनः विन्हल हो जाती है। अश्रुपात करती है, प्रभु वापस आते हैं और अपने अभिग्रह की पूर्ति होने से वे बाकुले, उड़द के बाकुले होते हैं, जिसे सेट का घोड़ा खाया करता था।

उस दान की प्रशंसा विश्व विख्यात है। वहां भी भावना का पलड़ा भारी है।

दोनों पात्र सुपात्र ये। फिर दोनों में से एक दान नर्क में और एक आत्मा कल्याण करके मोक्ष पधार गइं क्या कारण है। भावना ही प्रधान सिद्ध हुई है।

भगवती सूत्र में भगवान से जयंती ने प्रश्न किया है–

प्रश्न-भगवान किसका मरना अच्छा, किसका जीना अच्छा। किसका सोना अच्छा किसका जागना अच्छा ?

उत्तर-पोरोपकारी, धर्मात्मा, धर्म क्रिया में रत-अनुकम्पा वान का जागना अच्छा। और पापी, दुष्ट, हिंसक अत्याचारी का सोना अच्छा।

कहिये-क्या धर्मात्मा ऊपर सोता है। और पापी नीचे ? यह भावना का ही फल है। शुभ भावना वाला जागता रहेगा तो शुभ काम करेगा। और अशुभ भावना वाला दूष्कम करेगा।

आपने सामायिक करली। माला चल रही है। और मन दुकान में अटक रहा है। क्या यह सामायिक है ?

धर्मों में पाप और पुण्य, उत्थान और पतन सब भावना के आधीन हैं।

सम्राट अशोक अच्छा है ? क्या अच्छा है। उसने लाखों लोगों के रक्त से धरती को अभिरंजित कर दिया। उसकी तलवार सदा लपलपाती चण्डी की तरह रणचण्डी का आव्हान करती रही। लाखों सुहागनों का सुहाग लूटा और करोड़ों बच्चों को अनाथ बना दिया।

पर भावना के साथ ही अशोक बदल गया। तलवार मौजूद है। तलवार की लपलपाहट मौजूद है। उसका शासन मौजूद है पर भावना के परिवर्तन के साथ ही जो हिंसात्मक क्रियायें रक्षात्मक हो गयीं। वह दीन दुःखियों का रक्षक बन गया। उसकी भुजायें अनाथों का सहारा बन गयीं। यही कारण है कि अशोक महान बन गया।

भावना ही सर्वत्र प्रधान है। जो लोग भावना का महत्त्व नहीं समझते और दूसरों को चक्कर में डालते हैं। वे भूल करते हैं।

भावना के महत्त्व को समझो। भावना का बल बढ़ाओ, विशुद्ध भावना के लिये मोह का त्याग करना होगा। और मोह को त्यागने के लिये प्रेम को अपनाना होगा। बिना प्रेम से विश्व प्रेम की भावना नहीं आ सकती। आशा है-आप क्रिया और भावना का समन्वय करके विशुद्ध भावना के साथ पवित्र क्रियाओं की ओर अग्रसर होओ !

१२ : तपो-महिमा

आज तप की महिमा का विषय है । श्रद्धेय मुनि श्री सोभाग्यमल जी महाराज ने तप के बारे में बहुत कुछ कह दिया है। तप जैन संस्कृति का अनोखा तत्व है । मै जानता हूँ कि संसार के तमाम धर्मों ने तप के महत्व को स्वीकार किया है । पर, जैन धर्म में तप का वर्णन बर्गीकरण और उसके आचरण का विवरण है, वैसा संसार के किसी साहित्य में नहीं है ।

यह कोई अहंकार की बात है । पर, वस्तु स्थिति का निदर्शन है । हर धर्म के कुछ विशेष मौलिकता होती है । जैन धर्म में वह सर्वोत्कृष्ट मौलिकता है ।

जैन साधु का जीवन, तपकाही जोवन होता है । वह भोजन करता है तो तप करता है। वह भोजन छोड़ता है तो तप करता है । उसका चलना, फिरना, ठहरना, बोलना मौन करना, सब का सब तप में सुमार है ।

जहां अशुभ से शुभ प्रवृति की ओर आया जाता है, और शुभ से शुद्ध की ओर जाना सब तप है । तप सब रोगों की एक मात्र दवा है ।

कंबल पर धूल लग जाती है तो झाड़ दी जाती है ।

गधा, बकरा, घोड़ा मिट्टी में लोट लगाते हैं। जब उन पर धूल लग जाती है, तो शरीर की ऐसी प्रकिया की जाती है, कि सब धूल स्वयं झड़ जाती है।

तप क्या है। एक आत्मा की हलन-चलन, जिससे पाप रूपी धूल झड़ जाती है।

कर्म रूप इंधन को भस्म करने के लिये तपस्या दैदीप्यमान ज्वाला है।

आज हम जिस तपस्वी का विराट दिवस मनाने जा रहे हैं, उसके बारे में तो अन्त में कहूँगा।

कुरान में रोजे का महत्व है। वैदिक धर्म में चांद्रायण तप चला है। जैन धर्म में भी रत्नावली, कनकावल, आयंबिल, वद्धमान आदि तपों का प्रायश्चि विनय वैया वच्च, स्वाध्याय, ध्यानी कायोत्सर्ग आदि का सुन्दर वर्णन है। इतना सूक्ष्म विवेचन जो धर्म की देन है।

अनशन के बाद अणोदरी भी तप है। आप जितना भोजन करते हैं, उससे कम करिये अणोदरी है। पेट को ठूस-ठूस कर भर लेने के बाद उसमें से आलस्य के सिवा क्या निकलता है। शरीर बिगड़ कर देह रोग मंदिर बन बन जाता हैं।

जैन साधुओ में तपस्या का साकार रूप मिलता है। लोंकाशाह के बाद–धर्मदास जी महाराजा आदि बड़े-बड़े शूर वीर हो गये हैं।

जगरावे में रूपचन्द जी महाराज–जिन के नाम से यह संप्रदाय चल रही थी। बड़े ही प्रभावशाली महात्मा थे। उनके भक्त तमाम जाति के लोग थे। जैन धर्म का

कोई ओसवाल पोरवाला ने ही ठेका नहीं ले रखा है।

वे रूप चन्द जी महाराज जीवन भर तीन चीज से ज्यादा नही खाते थे। दो रोटी और एक जल, ये ही प्रतिदिन एक बार लेने की चीज थी। जीवन भर इस प्रण को निभाया उन्होंने। घी, दूध, दही उन्होंने कभी नहीं खाया।

तपस्वी पन्ना लाल जी महाराज ३६ वर्ष तक केवल छाछ के पानी पर रहे। डाक्टर माने या न माने। पर जैन संतो ने संसार को चकित करदे, वह कार्य कार्य करके बताया है।

लोग वायु पर अधिकार करके उसमें चल सकते हैं। पर बिना भोजन के रहना उनके लिए भी समस्या है।

रूप चन्द जी महाराज ने तपका महत्व कहा। सेठों की देखा देखी एक नाई ने भी पौषध करने का तय किया। धारणा हुआ। नाई बड़ा प्रसन्न हुआ। दूसरे दिन पौषध का वक्त आया। नाई ने कहा, करा दो महाराज पौषध। बारह बज गये-दो बज गये-पर धारणा जैसा कुछ आया ही नहीं। अब तो नाई के पेट में भूते दौड़ने लगे। उसके होश हवास गायब होने लगे। शिथिलता आ गयी। उसने उस महाराज से पूछा-महाराज, प्रतिज्ञा वापिस की जा सकती है? महाराज ने कहा-नहीं।

दूकानदार सौदा वापिस कर लेता है, पर महाराज प्रतिज्ञा वापिस नहीं लेते। दिन भर बिचारा परेशान रहा रात को भी परेशान रहा। रात को कोई मर गया। धन्ना ने कहा-कोई भूखा मर गया होगा बिचारा।

धन्ना ने कहा भावड़ों को धन्न है जो कहते हैं।

वे शूर वीर जो युद्ध क्षेत्र में पशुओं को मार भगाते हैं। और स्वयं अपने प्राणों पर खेल जाते हैं। वे तपस्या से नाम पर तो कांप उठते हैं।

आज मुनि श्री को २८ दिन का व्रत है। सब से बड़ी बात जैन मुनि के तप में होती है वह यह कि वे प्रति फल की ईच्छा नहीं रखते।

भूख हड़ताल करने वाले सत्याग्रही अपनी तपस्या का फल चाहते हैं। जो लोग तीन बार जेल गये तो उन्हें मिनिस्ट्री मिलनी ही चाहिये। उनका हक है। वे राष्ट्र पर एहसान थोपते हैं। जैन मुनि निष्काम तप करते हैं–किसी पर एहसान नहीं। वे केवल आत्म शुद्धि के लिये करते हैं। कह दो किसी नेता को, कर आत्म शुद्धि के लिये मास खाया। तो भी बाल जायेगी।

जैन मुनियों ने तप द्वारा २५०० वर्ष से शान्ति रखी। धर्मदास जी महाराज ने देखा कि साधु का मन डिगा। एक साधु ने धार में आमरण अनशन करके संथारा कर लिया था, पर इस त्रिशूल पर ठहरने को उसकी हिम्मत न रही।

धर्म के अपमान का प्रश्न आया। प्रश्न की निन्दा का अवसर आया। धर्मवीर, धर्मदास जी उज्जैन से धार पहुँचे। और उस साधु की जगह स्वयं संथारा करके जिन शासन के लिए जीवन अर्पण कर दिया।

उज्जैन की परंम्परा बड़ी ऊंची रही है। धर्म को दीपाने का श्रेय उज्जैन को बहुत मिला है। उज्जैन की

गौरव गाथा एक दिन गानी है। मैंने उज्जैन को सर्व धर्म सम्मेलन के लिए चुना, इसका यही तो कारण है।

कृष्ण ने युद्ध भूमि चुनने का निश्चय किया। वे कुरुक्षेत्र में गये। एक किसान खेत को पानी पिला रहा था। पर मेड़ बार-बार टूट कर पानी बह जाता था। वहां रोक के लिए कोई ऐसे पत्थर का साधन नहीं था। पानी बार-बार बह जाता था। किसान ने हसिये से अपने लड़के को काट दिया, और मेड़ पर डाल दिया। मिट्टी डाल दी, पानी रूक गया।

कृष्ण ने सोचा यहां की भूमि में प्रेम नहीं, मोह नहीं। यही स्थान ठीक रहेगा, जिससे यह क्षेत्र युद्ध क्षेत्र बन सके।

यह धरती का असर उज्जैन प्रेम के लिये पवित्र भूमि है। मुझे विश्वास है यहां धर्म प्रेम का विकास होगा।

जीवन नैया डगमगा रही है। पूना का एक अधिकारी अपनी पुत्री से पानी का गिलास लेकर मुंह तक भी न ले जा पाया और मर गया। ऐसे नश्वर जीवन से जो भी धर्म का आराधन हो सकता हो अवश्य कर लेना चाहिये।

ये चांद मुनि भी उन्हीं धर्मवीर धर्मदास जी की संतान हैं। उन्होंने आज २८ दिन का तप कर रखा है। आपकी शान्ति की तारीफ है। लोग कहते हैं, महाराज आप पूना से एरोप्लेन से आये। पहले तो हमें आश्चर्य होता था पर बाद में समझ में आया कि इन महाराज श्री ने ऐरोप्लेन भेजा था। इन चांद मुनि जी को जिनके कन्धे पर चढ़ कर हम आ गये। क्या हिम्मत है इनकी ? २० मील २१ मील कभी कभी ३० मील का सफर कर जाते। सुबह से शाम तक

बणजारों की तरह चलना ही चलना। हमारा सारा भार लेकर चाँद मुनि चले जा रहे हैं। बड़े पुरुषार्थी हैं ये, काले-सुरा ते धर्मसूरा! कर्मवीर का आज दूसरा रूप धर्मवीर हम देख रहे हैं। इन चांद मुनि को!

जैन साधुओं के जीवन में बलिदान की परम्परा है। संसार की समास्याओं को बड़ा भारी हल जैन साधु करते हैं। विनोबा भावे ने कहा—'यदि जैन साधु सहयोग दे दें तो समस्या शीघ्र हल हो जाये। महात्मा गांधी को स्थान-वासी साधुओं ने बड़ा सहयोग दिया स्वयं साधुओं ने खद्दर पहना। देश की आजादी की लड़ाई में पूज्य जवाहर लाल जी महाराज उपाचार्य गणेशी लाल जी महाराज आदि ने बहुत योगदान दिया।

आज देश स्वाधीन है, जिन लोगों ने एक कानी-कौडी भी खर्च नहीं की वे लोग मिनिस्टरों को बुला कर अपनी इज्जत बढ़ाना चाहते हैं।

गांधी जी को पापी कहने वाले लोग आजादी को प्राप्त करने के समय न जाने कहां छिपे थे, आज वे उनके तलुवे चाटते हैं।

गोवा की ज्वलंत समस्या आज देश के सामने है। हजारों वीर और बहादुर अपनी बलि चढ़ा रहे हैं। कहो उनको सहायता करो। पर देश रक्षा के नाम पर मौन लेते हो।

पृथ्वी राजकपूर को बुला कर रुपये खर्च किए जा सकते हैं। पर देश भाइयों की सेवा में कानी-कौड़ी नहीं चाहते।

बिहार में बाढ़ का प्रलय हुआ। हमने प्रेरणा दी बम्बई

से दस हजार का चैक और चालीस हजार के कपड़े सहायता में भिजवाये। रक्षा में पाप नहीं धर्म है।

देश सेवा में तुम सक्रिया सहयोग नहीं दे सकते, पर देश रक्षा का प्रयास शुभ प्रवृति है उसमें प्रेरणा देना पाप है।

नैतिकता का उपदेश देने वाले गोवा की समस्या सामने है, बहादुर वीरों की और उनके परिवारों की सहायता करो। खैर !

तमाम मुनि देश और धर्म की रक्षा और संस्कृति के प्रचार के लिए कटिबद्ध हैं। हम किसी इनिस्टर-मिनिस्टर के पास भीख मांगने नहीं जाते। यह जैन साधु का काम नहीं। साधु त्यागी है, उसमें अगर योग्यता है, उसके पास कुछ यदि देने को है, तो लेने वाले स्वयं चले आयेंगे। स्वयं आमन्त्रण देकर बुलाते हैं। तुम में साधुता नहीं ढोंग है।

तपस्या की बात हो रही है। तपस्या का एक आकर्षण है, तपस्या से व्यक्तित्व निखरता है। दुनिया खीची हुई चली आती है।

एक सती होने वाली थी एक सता ! लाखों लोग इकट्ठे हो गये। वे दोनों जीवित हैं पर दूसरी सती हो गई और कई लोग सता बन गए। अन्धविश्वास है ठीक समझो तो आओ, वरना भीख मांगने जाना हमारा काम नहीं। हजार बार जरूरत हो ले जाओ। हमने पुत्रैषणा, लोकैषणा आदि को छोड़ दिया है, फिर हम सरकारी लोगों के गुलाम बने फिरें यह ठीक नहीं।

२८ दिन का तप करके मुनि श्री कुछ मांगना चाहते हैं क्या? वे केवल आत्म शुद्धि के लिए कर रहे हैं, क्या

दिव्यता है इनमें, आप दर्शन करिये इनके !

एक बात अन्त में कह दूं। जितने रोग खाने से होते हैं, जितने लोग खाने वाले मरते हैं। उतने न तो रोगी होते हैं न मरते हैं जो तपस्या करते हैं।

आप ब्रह्मचारी बनना चाहते हैं, अहिंसा धर्म का पालन करना चाहते तप करिये। विकारों पर विजय पाने के लिए तप अमोघ शस्त्र है।

संसार के सभी रोग जो पेट में होते हैं, संसार के सभी युद्ध जो विश्व में होते हैं, उनका एक मात्र कारण है इस रसना की पराधीनता ! यह युद्ध की चिंगारी भड़का देती है। आप इसको वश में करिए। सारा संसार आपके वश में हो जाएगा। आपका शरीर रोगों से रहित हो जायेगा।

गुणस्थान का विकास क्रम

जीवन में दो विषय रखे गये हैं। सुन्दरता और कुरूपता! आप सुन्दरता मे प्यार और कुरूपता से घृणा करते हैं। मांस के लोथड़े से प्यार करना, प्यार नहीं मौत है। सौन्दर्य की परिभाषा में मांस का लोथड़ा नहीं आता।

एक शायर ने कहा—

आदमी का जिस्म क्या है,
जिस पै शैदा है जहां।
एक मिट्टी की इमारत,
एक माटी का मकां॥
खून इसमें गारा है,
और ईंट इसमें हड्डियां।
चन्द सांसों पर खड़ा है,
यह ख्याली आसमां॥
मौत की पुरजोर आंधी,
जब इसे टकारायेगी।
देख लेना यह इमारत,
टूट कर गिर जाएगी॥

—ऐ इन्सानों! वह ऊर्दू का शायर कहता है, तुम्हारा यह शरीर खून के गारे और हड्डी की ईंट से बना हुआ मकान है। कब ढह जायेगा, कोई ठिकाना नहीं। ऐ मौत के मेहमान जरा सुन!

उस मंजिले मकसूद पर पहुँचने का सोपान क्या है? यदि आपने लक्ष्य निश्चित कर लिया तो धर्म का राजमार्ग जानना आवश्यक है।

सब धर्मों ने भिन्न'भिन्न प्रकार से आत्मा के विकास क्रम को स्वीकार किया है।

बौद्ध भूमिकाओं को मानते हैं, योग में सविकल्प और निर्विकल्प समाधि के रूप में स्वीकार किया है। वैदिकों ने उत्थान की भूमिकायें मानी हैं। और जैन धर्म में गुणस्थान के रूप में विकास क्रम का स्वीकार किया गया है।

विचार भिन्नता के कारण बताये हुए रास्तों में भी भिन्नता अवश्य है, पर सब धर्मों में विकास क्रम को किसी न किसी रूप में माना अवश्य है।

जैन धर्म में आत्मा की स्टेजेज या स्टेशनें बहुत होने पर भी चौदह प्रकार से निश्चित कर दी गई हैं। जिन्हें गुण स्थान के नाम से सम्बोधित किया जाता है। आज मैं धर्म साधन या आत्म विशुद्धि के क्रम को कह रहा हूँ।

संसार की आत्मायें मोह के बन्धन से आबद्ध होने से विवश है। कुदेव, कुगुरू और कुधर्म में उसका विश्वास है। वह उन्हीं की पूजा प्रतिष्ठा में व्यस्त है। मिथ्यात्वी वे लोग हैं जो शरीर को ही आत्मा मानते हैं। और परिग्रह का मोह रखते हैं। उन दुष्टों की कमी नहीं जो धन या मकान के लिये दूसरे के खून से होलियां खेलने को तैयार हो जाते हैं। वे आग्रही अनात्यवादी चैतन्य के शूभ हैं। उन्होंने पाप में ही पुण्य समझ रखा है।

मनोविज्ञान द्वारा मन का विश्लेषण किया जाने पर रोगी मन, मुर्दा मन, चिन्तित मन, स्वस्थ मन की तरह एक पापी मन का भी वर्गिकरण किया जाता है। ये लोग बुराई करके भी अच्छाई की मोहर लगाना चाहते हैं। वे मिथ्यात्वी हैं।

प्रश्न उठता है जैसा कि भारतीय जी ने रखा है। गुण-स्थान की अवस्थाओं में मिथ्यात्व को भी गुण स्थान कि

आधार से माना गया है ?

मिथ्यात्व को गुण का स्थान मानना विसंगति ही तो है। यदि मिथ्यात्व को ही गुण का स्थान माना जायेगा तो विनाश का फिर क्या स्थान होगा ? एक शंका उदभूत होती है, मानव के मानस में जो बहुत कुछ स्वाभाविक ही है।

उत्तर जल्दी ही देना ठीक होगा। जैन धर्म ने विकास के चौदह सोपान में प्रथम स्थान मिथ्यात्व गुणस्थान को दिया है। जैन धर्म प्रत्येक आत्मा को निश्चय से अन्नत चरित्र और अन्नत बल वीर्य से युक्त मानता है। कीड़ी से कुंजर तक में ये अन्नत चतुष्टम विद्यमान था और है भी। निश्चय से वह ज्ञानवान है, पर व्यवहार में उसमें असत्य कल्पनायें घुस गई हैं। विकास के नाते ता व्यवहार के नाते, उसमें मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व होते हुए भी उसमें विकास का स्रोत मौजूद है।

आपने देखा कि एक मनुष्य आकाश को आकाश, भूख को भूख, प्यास को प्यास, हाथी को हाथी और घोड़ को घोड़ा मानता और कहता है। वह सत्य को सत्य ही कहता व मानता है। केवल देव, गुरू, धर्म और तत्वों से सम्बन्ध में उसकी धारणा गलत होती है। वह धर्म की दृष्टि से गलत है। व्यवहार की दृष्टि से नहीं ! इसीलिए उसे मिथ्यात्व गुण स्थान कहा गया है। मिथ्यात्वी धन को धर्म और शरीर को आत्मा मानता है। श्रद्धा, ज्ञान और चरित्र मिथ्यात्व के द्वारा प्रभावित होने के कारण वे मिथ्या कहे जाते हैं। उसके कारण समम्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र को मिथ्या ज्ञान मिथ्या दर्शन और मिथ्या चरित्र कहते हैं।

मिथ्यात्व के प्रभाव के कारण ही अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चरित्र और अनन्त बल वीर्य का भण्डार मनुष्य अपने आपको तुच्छ समझने लग जाता है। वह अपने आपको हीन मान कर पद-पद पर ठोकरें खाता है। और वासना का पुजारी हो जाता है। वासना से पराजित हो जाता है। तुम सम्यकत्वी होने का दावा करते हो फिर भी मृत्यु पर रोते हो, दुःखों से घबराते हो, यह मिथ्यात्व है।

हृदय के मिथ्यात्व के बाद विचारों के मिथ्यात्व का नम्बर आता है। अपनी बात की हठ पकड़ कर बैठे रहना और दूसरे की मुक्ति युक्त बात भी न सुनना, यह विचारो का मिथ्यात्व है। ज्ञाना-जीर्ण है। अरे प्राणी! बता तेरा ज्ञान ही कितना है? क्या तू घास की किस्म ही बता सकता है। क्या तुझे यह मालूम है कि पानी कितनी प्रकार का है? क्या तू पशु पक्षी के भेद ही बता सकता है? नहीं! फिर ज्ञान का अभिमान किस बल-बूते पर करता है? मनुष्य का ज्ञान अधूरा है। वह अभिमान करे यह वैचारिक मिथ्यात्व है।

मिथ्यात्व पाँच प्रकार का, दस प्रकार का और पच्चीस प्रकार का कहा गया है, जब तक मिथ्यात्व है, सम्यकत्व की प्राप्ति नही है।

आज तक इन्सान ने मिथात्त्व के घेरे में रहने के कारण युद्ध किये, खून की होलियां खेलीं और दुनिया में तबाही का ताण्डव नृत्य किया।

आपके मालवे की बात–आपके घर की बात कह दूं।

घर का राजा भोज! जो संस्कृत साहित्य को अमर कर गया! जिसके लिये कहा जाता था–

अद्य धारा सदा धारा,
सदा अम्बा सरस्वती ।
पण्डिता मण्डिता सर्वे,
भोज राज मुनि स्थिते ॥

वह धारा का भोज अपने पिता सिंधूल का इकलौता बेटा था । सिंधूल का आज्ञाकारी भोज जिसे वह संवारा भी न था कि मौत का नक्कारा बज गया ।

मौत निकट आ गई । उसने अपने भाई मुंज को बुलाया । भोज को भी बुलाया । और मुंज के हाथ में भोज का हाथ देते हुए कहा–'हृदय बांध टूटे हुए सिंधूल ने मुंज से कहा–

भैया ! मैं आखिरी निशानी तेरे हाथ में दे जाता हूँ । तुम इसे पढ़ा लिखा कर चतुर बना देना और यह राज्य इसको दे देना । तब तक तुम ट्रस्टी बनकर इस राज्य की रक्षा करना ।

भाई-भाई का निस्वार्थ प्यार संसार में दुर्लभ है । सभी प्यारों ने स्वार्थ की गंध आती है । एक मात्र भाई-भाई का प्यार ही ऐसा है, जिसमें कोई स्वार्थ नहीं होता ।

मुंज का हृदय टूट गया । वह फूट-फूट कर रोने लगा । उसका भाई नश्वर संसार छोड़ कर विदा हो गया ।

मुंज ने भोज की शिक्षा दीक्षा का इतना सुन्दर प्रबन्ध किया कि, जितना अधिक से अधिक हित चिंतक कर सकता था । भोज कुशाग्र बुद्धि बालक था । उसके हृदय में सरस्वती का निवास था । वह ज्ञानोपार्जन के साथ ही लोकप्रिय भी हो चला ।

मुंज को कभी-कभी यह विचार आने लगा कि क्या मैं इसी प्रकार राज सिंहासन पर सुशोभित रह सकूंगा । यह

अन्तर्द्वन्द उसे बार-बार सताने लगा। उसने सोचा यदि मेरे शासन में कोई कंटक आ सकता है तो वह भोज है। उसके हृदय में राज लिप्सा का लोभ जागृत हो गया।

सिंधुल की मृत्यु के दस वर्ष बाद उसके विचारों में कुछ अन्तर आया। वह बार-बार सोचने लगा—क्या मुझे भोज का शासित बन कर रहना होगा।

उसने अपनी आत्मा पर पत्थर रख कर निश्चय किया, कि इस कंटक को दूर कर देना ही श्रेयस्कर है।

उसने वधिकों को बुलाया और आदेश दिया कि—

'जाओ! भोज का वध करके उसकी आँखें निकालकर ले आओ।'

वधिक बिचारे विवश थे। आज्ञा पालन करना उनका कर्त्तव्य था। यदि वे आज्ञा का पालन नहीं करते हैं तो अपने और अपने परिवार वालों के प्राणों से हाथ धोते हैं।

भोज को लेकर वधिक जंगल में गये। उनके हृदय की अन्तर्वेदना उनके चेहरे पर झलक रही थी। भोज ने साश्चर्य उनसे पूछा—तुम उदास क्यों? क्यों लाए हो तुम मुझे यहां?

वधिकों के मुंह से शब्द निकलना भी कठिन हो रहा था।

भोज के बार-बार आग्रह पर वधिक बोले—

'क्षमा करना महाराज! हमें मुंज ने आपकी हत्या करने का आदेश दिया है और आपकी आंखें उन्हें भेंट करने का हुक्म है।'

भोज ने कहा—'तो फिर राज आज्ञा का पालन हो।'

वधिक कहने लगे—'महाराज यह अन्याय है, एक तो आप बेकसूर हैं, दूसरा हमने महाराज सिंधूल का नमक

खाया है। यह अन्याय हमारे हाथ से हो, हम नहीं चाहते।'

एक ओर हमारा घर, परिवार सब कुछ नष्ट होता है, दूसरी ओर हमारी आत्मा नष्ट होती है।

भोज ने पुनः कहा कि तुम चिन्ता मत करो। तुम राजाज्ञा का पालन करो

पर जब वधिक इसके लिए तैयार न हुए तब भोज ने कहा–मैं एक पत्र देता हूँ। तुम यह पत्र मुंज को दिखा दो। पुनः वह आज्ञा देदे तो तुम मेरा वध कर देना। इसमें तुम्हारा कोई दोष न होगा।

वधिकों को कुछ सहारा मिला। भोज ने अपना खून निकाल कर वृक्ष के पत्ते पर एक श्लोक लिखा।

वह जानता था, जब आपकी राष्ट्र भाषा संस्कृत थी। धारा में तो संस्कृत के धुरंधर पण्डितों के सिवाय गंवारों को प्रवेश ही नहीं मिलता था।

मुंज मन ही मन विचार कर रहा है–आज कंटकहीन भूमि प्राप्त होगी। भोज की आंखें आने की प्रतीक्षा में वह वधिकों को देखते ही उसने पूछा–काम तमाम कर आये।

वधिकों ने कहा–नहीं। एक चिट्ठी दी है भोज ने।

खतम कर दो भोज को, मुंज झल्ला उठा। मैं कुछ नहीं सुनना चाहता। मैं पत्र भी नहीं देखना चाहता।

कहते तो कह गया–पर मुंज ने ख्याल किया कि शायद पिता कोई खजाना भोज को बता गया हो। संभव है, भोज हमें बताना चाहता हो। पत्र देखने में हर्ज ही क्या है। बोला–आओ। पत्र इधर लाओ।

वधिकों ने पत्र भुज के हाथों में दिया– भुज ने श्लोक

पढ़ा। उसमें लिखा था–

मांधाता च कही भुजा कृतयुगा,
लंकार भूता गताः ।
सेतुर्येन महोदधौ विरचितः
ववासौ दशस्यांतकः ॥
अन्ये चापि युधिष्ठिर प्रभृ्य–
नैकेनापि समं गता वसुमती,
नूनं त्वया यास्यति ॥

वे लोग, जिन्होंने युग का निर्माण किया, वे राम जैसे पुरुष जिन्होंने समुद्र में भी पुल बना दिया, वे महाभारत के विजेता पाण्डव आदि कहां है। उन किसी के भी साथ यह धरती नहीं गयी। है मुंज ! मरा विश्वास है यह तेरे साथ अवश्य जायेगी।

सिर्फ इतने शब्द काफी थे। पढ़ कर मुंज के हृदय पर धक्का लगा। उसकी कल्पना का महल ढ़ह गया। वह पागल हो जाता है। भोज के लिए। उसके कानों में बार बार गूंजता है–

नूनं त्वया यास्यति

उसके हृदय में संपत्ति का जमीन का जो भूत था वह निकल गया। वह प्रसूता की तरह श्लथ होकर धरती पर गिर पड़ा। बार-बार गिर जाता है।

भुज कहता है, मैं राक्षस हूँ। नराधम नीच हूं। मेरे मन में यह पाप आया ही क्यों। कहां है मेरा भोज ?

सामंतगण मुज को भोज के पास ले जाते हैं। भोज दूर से ही अपने चाचा को आते देखता है–वह प्रणाम करने लिए आगे बढ़ता है।

यह है भारतीय संस्कृति और सभ्यता । जो घातक चाचा को भी प्रणाम करने की प्रेरणा देती है ।

मुंभ कहता है–बेटा ! मुभ नराधम नीच को मत छूना । मैं इन्सान नहीं राक्षस हूँ । मुझे माफ मत करना बेटा ! मुझे कुछ भी समझ नहीं पड़ता कि मैं क्या कर रहा हूँ । क्या मैं पत्थर तो नहीं हूँ । मैंने जरा से लोभ के लिए अपने हृदय के टुकड़े का भी बध करना चाहा । धिक्कार है मुझे ।

यह कहता हुआ भुज मूर्छित होकर जमीन पर लोट-पोट हो गया ।

भोज ने अपने चाचा को उठा कर–मूर्छा दूर की और कहा–

पितृव्य ! इसमें आपका कोई दोष नहीं ! लोभ का भूत जो आप में प्रविष्ट कर गया था । आप तो वही पुनीत पितृव्य है, जो पहले थे । जिन्होंने मुझे ज्ञान का खजाना दिया । आप स्वस्थ हों । चिन्ता न करें ।

एक राज्य का लोभ ही भुज को पागल बनाने में सफल हुआ । भला जिसे न जाने कितने लोभ और त्रिनया धारणा का शिकार होना पड़ता है । उसकी क्या दशा होती होगी ।

कहानी आपके सामने है । भुज पापी था । और भोज देवता । यदि आप भुज की जगह हो तो क्या करोगे ।

जरा, हृदय पर हाथ धर कर बताओ तो ?

दो पैसे के लिए इन्सानों का खून नहीं किया जाता है क्या ?

मन बड़ा पापी है । मन में पाप रहेगा तो आत्मा का

विकास रुक जायेगा ।

उसमें सम्यक्त्व का उदय होगा—तो समस्त प्राणी के प्रति समदृष्टि हो जायेगी । हिंसा द्वेष समाप्त हो जायेगा । और क्रोध मान माया और लोभ का अतिरेक न रहेगा ।

अनंतानुबंधी का क्रोध पत्थर की लकीर, मान वज्र का स्तम्भ, माया बांस की जड़ और लोभ किरमची रेशम के रंग के समान है । जो जीवन भर टिकते हैं ।

जब ये कषाय चतुष्ठम कम हो जाते हैं, तब सम्यक्त्वी होता है । सम्यक्त्व के बाद कषायों की मंदता और व्रत धारण के कारण आत्मा पंचम गुण स्थान में आता है ।

व्रतों की पूर्णता के कारण छठे गुण स्थान में आत्मा पहुँचाता है । कषायों की मंदता और प्रमाद के त्याग के कारण ७–८–९ वें गुण स्थान का आरोहण करता है । दशम् गुणस्थान में आत्मा कषायमुक्त हो जाता है ।

यहां से आगे योगों का निरोध आरम्भ होता है ।

ग्यारहवें–बारहवें गुण स्थान को पार करके चार घनघनाती कर्म को क्षय करके आत्मा जिन बन जाता है । यहां उसे अनन्त चतुष्टय का प्रसाद प्राप्त होता है । वह अनंत ज्ञानी, अनंत दर्शनी, अनंत चारित्री, अनंत बल वीर्य का धनी बन जाता है ।

इसके बाद, सदेहमुक्ति मुक्ति के बाद विदेह मुक्त अर्थात अयोगी होकर १४ वें गुण स्थान से पार होकर 'सिद्ध' बन जाता है ।

यह है आत्मा का विकास क्रम ।

* समाप्त *

विश्व में अहिंसा एवं तकनीकी विज्ञान चरम सीमा पर पहुँच गया है। अब इसके आगे विनाश के सिवा कुछ नहीं है। ऐसे समय में विश्व में अहिंसा, अप्रिय ग्रह एवं अध्यात्मिक विकास के विचारों को विश्व में फैलाने का

मुनि सुशील कुमार जी का योगदान

मानव जाति के कल्याण के लिए संजीवनी

का काम करेगा।

इस महान कार्य के लिए

महाराज श्री जी के चरणों में

हम सब सदस्यों का सविनय

वंदना एवं हार्दिक मंगल-कामनायें

स्वीकार कीजिये !

मन्त्री :

रोशन लाल जैन

७५१६४

प्रधान :

वकील चन्द जैन

७७०१२

मित्र मिलन

जैन नगर, मेरठ शहर।

फिर वैसा युग आयेगा···उस युग की रूढ़ियों का विरोध
हुआ भगवान महावीर द्वारा। अतः समाज ने कुछ
सुख की सांस ली। आज के युग में पुनः नव-नव
रूपों में हिंसा बढ़ रही है, पुनः एक महावीर का
अनुयायी कृत संकल्प है वैसा ही सुखद
वातावरण लाने को···कर्मरत हैं धर्म के
मूल्यवान खजाने को देश-विदेश में
निःस्वार्थ वितरित करने में !

विदेश से आपकी वापसी पर हम आपका

हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।

अम्बर

बिन्नी टैक्सटाईल्स शोरूम
५२६, बुढ़ाना गेट (निकट निगार)
मेरठ-२ फोन : ७५१३५
७५१६४

नगीन चन्द जैन

ए
व
म्
परिवार गण

जैनसन्स

मुफ्तलाल व लाल भाई
ग्रुप शोरूम
५१७/२, बुढ़ाना गेट, मेरठ-२
(निकट बिन्नी शोरूम)

जैनसन्स

ड्रेस मैटीरियल शोरूम
७४, चौक सदर बाजार
मेरठ-२ फोन : ७२७५४
७५१६४

विश्व वन्दनीय मुनि

श्री सुशील कुमार जी महाराज

जिन्होंने

अपनी विदेश-यात्रा में

असंख्य युवकों को

अहिंसा और सद् आचरण

की दीक्षा दी

हमारा कोटि-कोटि नमन !

प्रधान : मंत्री :

सत्यपाल जैन कैप्टन धनराज जैन

यंग फ्रेन्डस एसोशियेसन

जैन नगर, मेरठ।

महाराज श्री सुशील कुमार जी

के

स्वदेश आगमन पर

हार्दिक अभिनन्दन !

मेहताब चन्द जैन

मैट्रो पोलिटिन काउन्सलर

२००, किनारी बाजार, नौघरा

दिल्ली-६

कष्ट उठा, जग का हित करते,
सब्र, सुजन, सरिता औ चन्दन।
जग उपकारी, मुनि सुशील के,
चरणों में श्रद्धायुत वन्दन॥

मुनि श्री सुशील कुमार जी के

विदेश-यात्रा से वापस

स्वदेश पधारने पर

हार्दिक वन्दन के साथ अभिनन्दन!

कमल हैण्डलूम क्लाथ डीलर

सुभाष बाजार, मेरठ।

फोन : ७४८८१
७४६२६ निवास

मुनि श्री सुशील कुमार जी

की

मंगलमय विदेश यात्रा

से

वापस लौटने पर

हरियाणा जैन समाज

की ओर से

हार्दिक अभिनन्दन !

जिनेन्द्र कुमार जैन

कुरुक्षेत्र विश्व विद्यालय

कुरुक्षेत्र

मुनि श्री सुशील कुमार जी

की

मंगलमय विदेश-यात्रा

से

वापस लौटने पर

शुभ कामनायें !

तेज प्रकाश कौशिक

अहिंसा भवन,

शंकर रोड, नई दिल्ली

सोने की परीक्षा अग्नि में होती है !

किन्तु,

सन्त की परीक्षा

निन्दा-प्रशंसा के क्षणों में होती है !

मुनि श्री सुशील कुमार जी

ने निन्दा एवं प्रशंसा का समान भाव से

स्वागत कर

सहस्त्र-सहस्त्र जनों की

श्रद्धा प्राप्त की है !

परम संत को हार्दिक वन्दन !

मन्त्री :
जुगल किशोर जैन

प्रधान :
प्रीतम चन्द जैन

स्वाध्याय सभा

जैन नगर, मेरठ।

जैन जगत के ज्योतिर्धर हे,
विश्वधर्भ के हे नव प्राण ।
तुमने ऊंचा किया निरन्तर,
भारत भूमि का अभिमान ॥

मुनि सुशील कुमार जी महाराज

के

४२ सप्ताह की विश्व-यात्रा पश्चात स्वदेश आगमन

पर

हार्दिक मंगल कामनाओं

के साथ

चिरंजीशाह राजकुमार

तीर्थंकर महावीर मार्ग, मेरठ ।

तार : महावीर

फोन : ७५५८०-७३१२६ आफिस
७३८४७-७५६२७ फैक्ट्री
७२३१० निवास

मुनि श्री सुशील कुमार जी

को

अ. भा. चौरासिया ब्राह्मण महासभा

की ओर से

स्वदेश वापसी पर

शुभ कामनायें !

बिहारी लाल शर्मा
बी० ए०
जनरल सेक्रेटरी
बाजार सीताराम, दिल्ली

परम सन्त

मुनि श्रेष्ठ श्री सुशील कुमार जी

की

सफल विदेश यात्रा

के बाद

उनके स्वदेश आगमन पर

हार्दिक अभिनन्दन !

आॅल इण्डिया दिगम्बर भगवान महावीर २५०० वां निर्माण महोत्सव सोसायटी (मेरठ सम्भाग)

मंत्री मेरठ सम्भाग
प्रेम प्रकाश जैन

अखिल भारतीय प्रधान मंत्री
सुकुमार चन्द जैन

महाराज श्री मुनि सुशील कुमार जी

के

विदेश भ्रमण की वापसी पर

शत् शत् नमन !

प्राणी मित्र

आनन्द राज सुराणा

नई दिल्ली

अपनी विदेश-यात्रा में

हर नारी को

मातृत्व की सही दिशा की दीक्षा

अहिंसा का सन्देश

और

नारी गरिमा को उन्नत करने की राह

दिखाने वाले

परम भारतीय संत

विश्व वन्दनीय मुनि

श्री सुशील कुमार जी

का

हार्दिक अभिनन्दन !

मंत्री :
श्रीमती विद्यावन्ती जैन

प्रधान :
लीलावन्ती जैन

महिला मैत्री संघ

जैन नगर, मेरठ

भारतीय संस्कृति के प्रबल प्रचारक

अहिंसा और सत्य के संदेशवाहक

मुनि श्री सुशील कुमार जी

आधुनिक विवेकानन्द बनें

यही हमारी हार्दिक शुभ कामना है !

शंकर देव

संसद सदस्य

५६, नार्थ एवेन्यु, नई दिल्ली

रचियता :—

- एक विश्व एक सरकार
- उल्टी खोपड़ी
- क्या ईश्वर है ?
- इन्द्रा गांधी समग्र रूप में
- सदा निराहारिणी
- माणिक्या योगिनी
- मौलिक आधार याद रख लिये मौलिक कर्त्तव्य भूल गये

महाराज श्री सुशील कुमार जी

के

स्वदेश आगमन पर

हार्दिक अभिनन्दन !

कैलाश चन्द जैन

२२, कोटला मार्ग

नई दिल्ली

(विनय नगर)

पुस्तक प्रणेता

मुनिवरः सुभाग जी

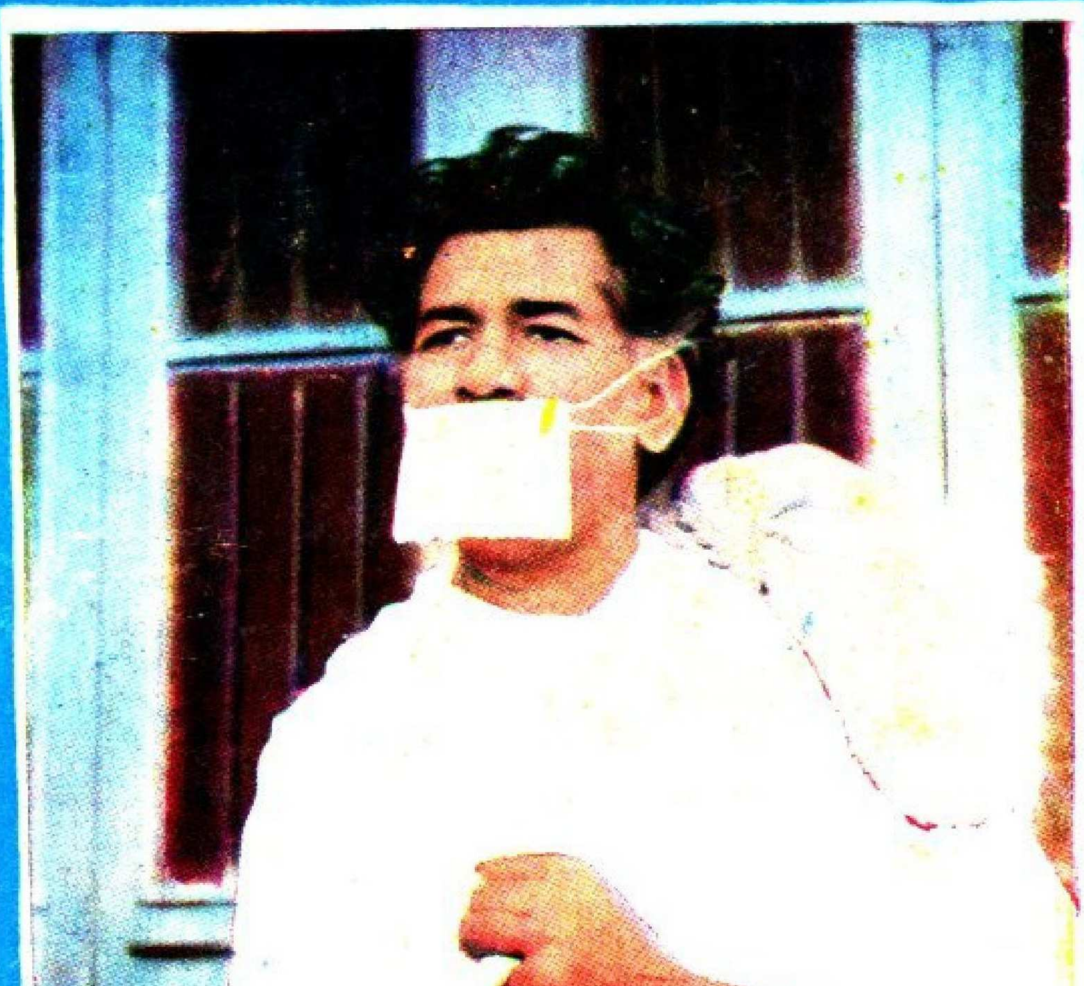

संपादकः जय प्रकाश शर्मा

अध्यक्षः नरेश चंद जैन

कमला पॉकेट बुक्स

मेरठ-२.